‘हरदेवी संबंधी लेखन में गरिमा श्रीवास्तव द्वारा अकादमिक चोरी का मामला

कुछ दिन पहले मेरी नज़र ‘हरदेवी की यात्रा’ नामक एक सम्पादित पुस्तक पर गई। किताब को २०२३ में सेतु प्रकाशन से गरिमा श्रीवास्तव ने सम्पादित किया है। चारु सिंह ने जब अपने शोधपूर्ण दो लेखों[1] के रास्ते श्रीमती हरदेवी के जीवन की पुनर्रचना की थी और उन्हें अकादमिक चर्चा के केन्द्र में लाई थी, तबसे अब तक हरदेवी के जीवन (उनकी जीवनी) को मैंने हर दिन बढ़ते देखा है। शायद ही कोई सप्ताह गया हो जब साथ बैठ कर हमने उसके खोजे किसी नए पहलू, नई सूचना पर लम्बी चर्चा न की हो।

हरदेवी के जीवन की यह यात्रा २०१३ से शुरु हुई थी जब चारु ने हंस में ‘सीमंतनी उपदेश’ पर प्रकाशित अपने लेख में उसकी लेखिका ‘अज्ञात हिन्दू औरत’ पर बात की थी। तब वह एम.ए. की छात्रा थी। २०१४ में पीएचडी के पहले साल में उसे हरदेवी की चार रचनाएँ और उनके पत्र ‘भारत भगिनी’ के कई अंक मिले। उसकी रुचि ‘अज्ञात’ लेखिका को खोजने और उसके जीवन संघर्ष को सबके सम्मुख प्रस्तुत करने में थी। अपने शोध के आधार पर उसने स्थापित किया कि सीमन्तनी उपदेश की लेखिका श्रीमती हरदेवी थीं।

यह बड़ी दिलचस्प बात है कि जिस वक़्त चारु सिंह श्रीमती हरदेवी और उनकी रचना सीमन्तनी उपदेश के बारे में यह तमाम सूचनाएं इकट्ठा कर रही थी उसी समय गरिमा श्रीवास्तव का एक लेख ‘प्रतिमान’ में प्रकाशित हुआ था जिसमें उन्होंने ‘सीमंतनी उपदेश’ की लेखिका को दावे के साथ एक ऐसी लेखिका बतलाया था जिसने पितृसत्ता से डर कर अपना नाम और पहचान ‘अज्ञात’ रखे थे। इस लेखिका का ख़ुद को ‘अज्ञात’ रखना उन्नीसवीं सदी की लेखिकाओं की नियति और अनिवार्य लक्षण मानते हुए उन्होंने यह स्थापना दी थी कि उस दौर की कोई भी लेखिका अपनी पहचान ज़ाहिर करते हुए पितृसत्ता से लड़ाई मोल नहीं ले सकती थी,

“स्त्री को उसके दोयम दर्जे का अहसास सबसे पहले घर के भीतर ही कराया जाता है और घर में ही उसके बौद्धिक और मानसिक व्यक्तित्व का निर्माण होता है। आचरण-पुस्तकों के लिए इसी घरेलू परिवेश का चुनाव किया गया जो स्त्रियों के लिए सुपरिचित, यथार्थ और प्रामाणिक परिवेश था। इनमें इक्का-दुक्का स्त्री रचनाकारों के नाम भी दीख पड़ते हैं - जिन्हें पितृसत्तात्मकता के मानसिक अनुकूलन और शिक्षित हो रही स्त्री के प्रारंभिक साक्ष्यों के तौर पर पढ़ा जाना चाहिए। वे लिख कर अपने होने की तस्दीक करती हैं और जहाँ भी व्यवस्था के विपक्ष में लिखती हैं, वहाँ वे अपनी सही पहचान को छुपा ले जाती है। प्रमाण के तौर पर 1882 में छपी सीमंतनी उपदेश को देखा जा सकता है, जिसमें लेखिका के

---

[1] **‘अज्ञात’ हिन्दू स्त्री कैसे बनती है?” के नाम से अप्रैल-जून २०१६ की ‘आलोचना’ पत्रिका में प्रकाशित, और दूसरा लेख ‘प्रतिलोकवृत्त के रूप में स्त्रियाँ’ भी अक्टूबर-दिसंबर २०२० की ‘आलोचना’ में ही प्रकाशित।**

नाम की जगह एक 'अज्ञात हिंदू औरत' लिखा गया है। व्यवस्था के विरोध में बोलने का खतरा सीधे - सीधे ये स्त्रियाँ नहीं उठातीं और जो बोलती हैं वे पंडिता रमाबाई सरीखी स्त्रियाँ हैं, जो हिंदू धर्म को त्याग चुकी हैं और भारतीय स्त्रियों की स्थिति में सुधार के लिए अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर अपनी बात रखती हैं।"[2]

मैं पुस्तक की समीक्षा इस बिन्दु के साथ शुरू करूँगा कि आख़िर २०१४ से अब तक ऐसा कौन सा नया शोध प्रकाशित हुआ और उसने ऐसी कौन सी नई सूचनाएँ उपलब्ध कराईं, जिसने गरिमा जी को अपनी 'अज्ञात स्त्री' संबंधी धारणाओं को बदलने पर मजबूर कर दिया। हिन्दी के मौजूदा अकादमिक परिदृश्य में यह बदलाव था - हरदेवी का उन्नीसवीं सदी की तेज-तर्रार लेखिका और राजनीतिक-सामाजिक कर्मी के रूप में स्थापित हो जाना। हरदेवी सम्बन्धी चारु सिंह के शोध ने यह करके दिखाया। उस शोध ने उन्नीसवीं सदी के स्त्री प्रश्न पर बनी-बनाई कई मान्यताओं को धराशायी कर दिया। चारु ने अपने शोध के ज़रिये यह भी दिखलाया था कि कैसे 'सीमंतनी उपदेश' की लेखिका की कोई मंशा ख़ुद को 'अज्ञात हिंदू औरत' के रूप में स्थापित करने या अपनी पहचान छिपाने की नहीं थी। यह काम तो बहुत बाद में जाकर बीसवीं सदी के अंत में हुआ जब डॉ० धर्मवीर ने 'सीमंतनी उपदेश' को सम्पादित करते वक़्त लेखिका के नाम की जगह लिखे 'एक हिन्दू औरत की तसनीफ़' को एक 'अज्ञात हिंदू औरत' लिख दिया।[3]

ऊपर उल्लिखित चारु सिंह के दोनों लेख फ़िलहाल हरदेवी संबंधी एकमात्र मौलिक शोध हैं लेकिन यह देख कर बड़ी निराशा हुई कि इस पुस्तक की संपादकीय भूमिका में न सिर्फ़ उसे संदर्भ सूची में कोई जगह नहीं दी गई बल्कि बिना उसके लेखों का उचित संदर्भ दिए उसके शोध कार्य, उसके द्वारा खोजी गई सूचनाओं और उसके निष्कर्षों को ज्यों का त्यों इस्तेमाल कर लिया गया। हरदेवी की किताब सम्पादित करते वक्त गरिमा जी ने शोध के सामान्य शिष्टाचार और नैतिकता का भी पालन नहीं किया। यही नहीं चारु ने अपने शोध से स्थापित किया था कि सीमंतनी उपदेश' की लेखिका हरदेवी हैं। इसका श्रेय भी गरिमा जी उससे ले लेती हैं और रमण प्रसाद सिन्हा को दे देती हैं। लिखती हैं,

"अभी हाल ही में प्रोफ़ेसर रमण सिन्हा ने गोविन्दवल्लभ पन्त संस्थान में अमृत महोत्सव के उपलक्ष्य में आयोजित एक राष्ट्रीय संगोष्ठी (27-28 दिसंबर, 2022) में प्रस्तुत अपने पर्चे में एक दुर्लभ दस्तावेज के हवाले से यह सिद्ध कर दिया कि हरदेवी ही 'सीमंतनी उपदेश' की लेखिका थीं और उन्होंने ही 'सीमंतनी संगीत' की भी रचना की थी, जो अनुपलब्ध है."

---

[2] **श्रीवास्तव, गरिमा "नवजागरण, स्त्री - प्रश्न और आचरण - पुस्तकें". प्रतिमान , २०१४**

[3] **आलोचना २०१६ का लेख**

रमन सिन्हा जेएनयू में पीएचडी के दौरान मेरे शोध निर्देशक रहे हैं। मैंने ही उन्हें पहली बार यह बताया था कि सीमन्तनी उपदेश की लेखिका श्रीमती हरदेवी थी और चारु सारे तथ्य और सूचनाएं इकट्ठी कर रही है। उन्हें विश्वास नहीं हो रहा था। चारु के शोध से वह बहुत प्रसन्न हुए थे। आखिरकार वह भी चारु सिंह के शिक्षक रहे हैं। अपने विद्यार्थी को मेहनत करता देख कौन शिक्षक खुश नहीं होगा! (यह रमण जी के नए दावों को जानने से पहले लिखा अंश है। हमें तो खबर भी न थी कि रमन जी ने इसे अपना शोध बताना शुरू कर दिया है। 5 फ़रवरी 2020 को चारु ने अपना पीएचडी जमा किया दो साल बाद फ़रवरी 2022 में रमण जी ने उसका वायवा लिया।)

एकाएक जब गरिमा जी चारु सिंह की हरदेवी को सीमंतनी उपदेश की लेखिका के रूप मे स्थापना के शोध का श्रेय भी रमण प्रसाद सिन्हा को देने लगीं तो इसपर ध्यान गए बिना न रहा। क्योंकि मामला यह था कि रमण जी ख़ुद 2019 में छपी अपनी दो किताबों [4] में हरदेवी को 'सीमन्तनी उपदेश' की लेखिका के रूप में पहचानने के लिए चारु के लेख का संदर्भ देते हैं। इस संदर्भ के लिए रमण जी की एक पुस्तक का चित्र देखिए,

तय करने के सवाल पर हर जगह मतभेद थे लेकिन हिन्दी क्षेत्र, नेहरू के शब्दों में कहें तो 'राष्ट्रवाद की व्याधि'[5] से कुछ ज्यादा ही पीड़ित था।

राजनैतिक प्रश्नों के समानांतर सामाजिक मामलों को मुख्यधारा में प्रमुखता से लाने के उद्देश्य से 1887 ई. में महादेव गोविन्द रानाडे (1842-1901)और रघुनाथ राव (1831-1912) ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस से अलग राष्ट्रीय सामाजिक सम्मलेन की स्थापना की। राष्ट्रीय सामाजिक सम्मलेन की वार्षिक रपटों को पढ़ने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि उन दिनों समाज-सुधार के केंद्र में मुख्यतः स्त्री से जुड़े मुद्दे और प्रश्न ही थे। राष्ट्रीय-सामाजिक सम्मलेन के छठे अधिवेशन में श्रीमती हरदेवी(1863-1926) ने सम्मलेन को कांग्रेस से अधिक महत्वपूर्ण संगठन ठहराते हुए कहा कि, "कांग्रेस के द्वारा लोग सरकार से न्याय पाने की आशा करते थे जबकि सम्मलेन के द्वारा उनकी सामाजिक स्थिति में वास्तविक सुधार हुआ है। ब्रिटिश सरकार के हाथों से जिस न्याय की अपेक्षा लोगों को थी, उसकी उपेक्षा करके ही उनके साथ न्याय किया जा सकता है, जिनके साथ खुशी और गम, दुःख और सुख जुड़े हुए हैं क्योंकि, "स्त्रियों के पक्ष पुरूषों के हैं / उड़ते हैं वे साथ-साथ, साथ-साथ डूबते हैं, /बौना या ईश्वर बनकर, चाहे बंधनयुक्त हों या हों उन्मुक्त।"[6] टेनीसन की इस कविता के माध्यम से स्त्री-प्रश्न के मर्म को रेखांकित करने वाली हरदेवी उत्तर भारत के पुरूष प्रधान समाज में उन चंद स्त्री बुद्धिजीवियों में थीं जिन्होंने उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध और बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में समाज-सुधार और स्त्री-शिक्षा के मामलों को जोर-शोर से उठाया लेकिन उसका उल्लेख बंगाल-नवजागरण केन्द्रित आधुनिक भारत के इतिहास लेखन में कहीं नहीं मिलता। 'लन्दन यात्रा (1888) और 'लन्दन जुबली (1889) जैसे यात्रा-संस्मरण, हुक्मदेवी (1892) शीर्षक उपन्यास, कुछ कवितायें, लेख और सीमंतनी उपदेश'[7] जैसी पुस्तक की तेजस्वी रचनाकार ने

उद्योगीकरण के पक्षपाती थे। चरखे-करघे के आधार पर भारतीय अर्थतंत्र पुराने ढंग से गठित हो, इसके वह कायल न थे। उनके लेखन के अध्ययन से विदित होता है कि हिन्दी नवजागरण की अपनी विशेषताएं हैं; वह बंगाल या गुजरात के नवजागरण से भिन्न है। ये विशेषताएं भारतेंदु-युग में भी मिलती हैं। "...इस तरह जो नवजागरण 1857 के स्वाधीनता संग्राम से आरम्भ हुआ, वह भारतेंदु-युग में और भी व्यापक बना, उसकी साम्राज्य-विरोधी, सामंत-विरोधी प्रवृत्तियाँ द्विवेदी युग में और पुष्ट हुई।" (महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नवजागरण, राजकमल प्रकाशन दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1977, पृष्ठ 18 -19)

5. "We suffer from the disease of nationalism, and that absorbs our attention and it will continue to do so till we get political freedom. "Jawaharlal Nehru, An Autobiography, Oxford University Press,New Delhi,Fifth Impression, 1987, p.383
6. Quoted in Sita Ram Singh, Nationalism and Social Reform in India, Ranjit Printers and Publishers,Delhi,1968,p.93
7. देखें, 'अज्ञात' हिन्दू स्त्री कैसे बनती है?, चारू सिंह, आलोचना, 58, अप्रेल-जून 2016, (स) अपूर्वानंद, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।

6 | स्त्रियों की स्थिति

---

[4] मदर इंडिया का जवाब, चंद्रावती लखनपाल, भूमिका एवं प्रस्तुति रमण सिन्हा, अनन्य प्रकाशन, 2019, पृष्ठ 4-5, स्त्रियों की स्थिति

(अब तो रमण जी भी अपनी किताब को भूल गए हैं और उन्हें ग़लतफ़लमी हो गई है कि उन्होंने ही हरदेवी कि पहचान कि। वे लिख रहे हैं कि चारु ने अनुमान लगाया था कि इस किताब की लेखिका हरदेवी थी और उन्होंने उद्धरण खोज कर उसकी स्थापना का सबूत दे दिया।

अकादमिक शोध के कुछ अनिवार्य उसूल होते हैं। जब एक शोध छात्र किसी शोध-विषय/प्रस्ताव को पास कराने के लिए विभाग के सम्मुख उपस्थित होता है तब उससे कुछ सवाल पूछे जाते हैं। जैसे अमुक विषय पर पहले क्या कार्य हुआ है और कैसे उसका विषय पहले हुए कार्यों का दोहराव नहीं है और उसमें नया क्या है। इसके लिए छात्र एक साहित्य समीक्षा (Literature Review) लिखता है। अगर वह छात्र पहले हुए शोध कार्यों के लिए अपनी साहित्य समीक्षा में बस यह लिखकर कि - "हरदेवी के बारे में डॉ. चारु सिंह ने एक विस्तृत शोध आलेख में उनके रचनात्मक योगदान की विस्तृत चर्चा करते हुए लिखा है.."[5] और इस एक पंक्ति के बाद उस शोध की सारी सूचनाओं और विश्लेषण की नक़ल कर ले रहा है, तो उसका सिनॉप्सिस तक पास नहीं होगा कि उसके प्रस्ताव में कुछ भी नया नहीं है और इस विषय पर शोध तो पहले ही हो चुका है।

एक प्रसंग देखिए। हरदेवी ने लंदन से लौटकर अपनी सारी संपत्ति लगाकर विधवाओं के लिए नारी शिल्पालय नाम का एक वोकेशनल स्कूल खोला था। यह जानकारी चारु के शोध से सामने आई जो आलोचना पत्रिका में छपी थी। यह सार्वजनिक डोमेन में उपलब्ध और प्रकाशित तथ्य है।[6] इसलिए अव्वल तो उसका संदर्भ न देना ही अकादमिक नकल के तहत आता है। उसके बाद भी अगर कोई कहे कि हो सकता है किताब की संपादिका ने ख़ुद 'द कायस्थ समाचार' के यह आर्काइव देखे होंगे तो यह सम्भव नहीं लगता। क्योंकि अंग्रेजी में छपने वाली इस पत्रिका में छपी हरदेवी के नारी शिल्पालय की इस सूचना का हुबहू चारु सिंह के द्वारा किया गया अनुवाद गरिमा जी ने कॉपी पेस्ट किया है। आगे आलोचना के 2020 में छपे चारु के लेख और 2023 में छपी गरिमा जी की किताब की भूमिका के इस हिस्से को चाहे तो कोई भी आमने -सामने रखकर देख सकता है। बस एक जगह अंग्रेज़ी के ABCDE को हिंदी के अ ब स द में बदलने और दो जगह शिल्पालय को शिल्पायन कर देने से क्या यह नक़ल छिप सकती है? न जाने क्यों गरिमा जी ने 'शिल्पालय' को शिल्पायन कर दिया। इसके आगे कायस्थ समाचार की मूल प्रति की तस्वीर भी लगा रहा हूँ जिसे मोबाइल से खींचने के लिए चारु को पटना के सच्चिदानंद सिन्हा लाइब्रेरी के कर्मचारियों से कितनी आरज़ू मिन्नत करनी पड़ी थी।

---

[5] **गरिमा श्रीवास्तव की उपरोक्त पुस्तक में पृष्ठ १५**

[6] **सिंह, चारु . प्रतिलोकवृत्त के रूप में स्त्रियाँ, आलोचना- अक्टूबर-दिसम्बर 2020**

प्रतिलोकवृत्त के रूप में स्त्रियाँ

चारु सिंह

"जैसा कि हमने देखा उन्नीसवीं सदी के हिंदी सार्वजनिक क्षेत्र में स्त्रियाँ ग़ैरमौजूद नहीं थीं। यूरोप और अमेरिका की तरह यहाँ भी वे एक प्रतिस्पर्धी लोकवृत्त के रूप में मौजूद थीं जिन्हें नैन्सी फ्रेज़र ने सबाल्टर्न पब्लिक का नाम दिया है। भले ही हिंदी लोकवृत्त में स्त्रियों की सक्रियता के इतिहास को ठीक ढंग से सुरक्षित न किया गया हो और उन्नीसवीं सदी के 'हिंदी नवजागरण' संबंधी तमाम अध्ययन दिखलाते हों कि उस वक़्त का साहित्यिक क्षेत्र पूरी तरह से पुरुषों से बना हुआ था, लेकिन वास्तव में हिंदी का लोकवृत्त कभी ऐसा एकरेखीय, एकांगी और संकीर्ण नहीं था।"

चारु सिंह दिल्ली विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग में शोधार्थी हैं। जेंडर, साहित्येतिहास और समसामयिक विषयों पर लिखती हैं।
संपर्क : charusingh.du@gmail.com

उन्नीसवीं सदी के हिंदी लोकवृत्त में 'स्त्री शिक्षा' कैसी हो, इसको लेकर हिंदी की दुनिया में तमाम बहसें हुईं। छोटे-बड़े सभी तरह के लेखक, सार्वजनिक जीवन में सक्रिय वर्चस्वशाली व्यक्ति, पत्रकार, कवि और सुधारक—सभी इसे लेकर अत्यधिक गम्भीर चर्चाओं में लगे हुए थे। स्त्री के भाग्य को लेकर चिन्तनशील ये प्रभावशाली व्यक्ति अध्ययन की सुविधा के लिए रूढ़िवादी-सुधारवादी आदि समूहों में रखकर देखे जा सकते हैं। इनमें से कुछ स्त्रियों को घर सँभालने और पति सेवा संबंधी शिक्षा तक सीमित रखने की बात करते थे, जिस श्रेणी में हरिश्चंद्र की बहुचर्चित *बालाबोधिनी* जैसी पत्रिकाओं और इसी दृष्टिकोण से लिखी जाने वाली *भाग्यवती, देवरानी जेठानी की कहानी* जैसी पुस्तकों को रखा जा सकता है। दूसरे समूह के सुधारक स्त्रियों को वेद तथा भाषा आदि भी पढ़ा दिए जाने के पक्षधर थे, जिनमें जालन्धर की आर्यसमाजी कन्या पाठशाला आदि को शामिल समझा जा सकता है। मुज़फ़्फ़रपुर के द्वारकाकुँवर ठाकुर जैसे तुलनात्मक रूप से आधुनिक व्यक्ति भी सार्वजनिक क्षेत्र की इन बहसों में देखे जा सकते हैं जो स्त्रियों के लिए पुरुषों के समान आधुनिक उच्च शिक्षा की वकालत कर रहे थे जिससे इन स्त्रियों के पति 'व्यभिचार' की राह न जाएँ।[1] ये सभी बहसें स्त्रियों के बारे में थीं लेकिन इनके अभिकर्ता पुरुष थे। क्या इसका आशय यह लिया जाए कि उन्नीसवीं सदी के हिंदी लोकवृत्त में स्त्रियों से जुड़े मसलों का निर्णय पूरी तरह पुरुषों के हाथ में था? क्या स्त्रियाँ अपनी शिक्षा तथा अपने जीवन से जुड़े दूसरे मसलों पर चल रही इन बहसों में कोई हस्तक्षेप नहीं कर रही थीं और पुरुष समाज द्वारा दिए जाने वाले निर्णय की प्रतीक्षा में थीं? इतिहास की रेखीय और सामान्य समझ इसका उत्तर 'हाँ' में प्रस्तावित करती है। इसके बावजूद अभिलेखागारों में उन्नीसवीं सदी के हिंदी जगत से जुड़े जो साक्ष्य मौजूद हैं, वे बतलाते हैं कि ऐसा था नहीं। उन्नीसवीं सदी के अभिलेखीय साक्ष्य दिखलाते हैं कि स्त्रियाँ अपने जीवन, सामाजिक हैसियत और शिक्षा-दीक्षा से जुड़े मसलों पर न सिर्फ़ लगातार लिख रही थीं बल्कि अपनी समस्याओं के समाधान के लिए सार्वजनिक मंचों का इस्तेमाल करते हुए जनमत को अपने पक्ष में मोड़ने की कोशिश भी कर रही थीं। ये स्त्रियाँ हिंदी का प्रतिलोकवृत्त थीं।

उन्नीसवीं सदी के दौरान हिंदी क्षेत्र के सार्वजनिक मंचों से सक्रिय ये स्त्रियाँ आपस में एक संवाद तथा सहयोग की भावना के साथ जुड़ी हुई थीं। इन लेखिकाओं, संपादिकाओं, पाठिकाओं और सुधारक स्त्रियों ने स्त्री शिक्षा, विधवा-विवाह, सहवास क़ानून जैसे बहुत से मुद्दों पर हिंदी लोकवृत्त के वर्चस्वशाली विचारों का विरोध किया। यह विरोध कई बार किसी लेखिका के व्यक्तिगत लेखन के ज़रिए हो सकता था, कई बार पत्रिकाओं में तीखे ख़त लिखकर, किसी आलेख या टिप्पणी के प्रकाशन के ज़रिए और कई बार स्त्री-सभाओं आदि के ज़रिए कोई प्रस्ताव पारित करके; जैसा विरोध उन्नीसवीं सदी की महत्त्वपूर्ण लेखिका और आगरा-लाहौर की एक महत्त्वपूर्ण समाज सुधारक श्रीमती हरदेवी ने अपने घर पर स्त्रियों की सभा करके सहवास क़ानून लाने के पक्ष में उस वक़्त सरकार को अर्ज़ी देकर की थी, जब खुद उनके पति और आर्य समाज के प्रभावशाली कार्यकर्ता बैरिस्टर रौशनलाल और बाल गंगाधर तिलक सहित देश-भर के तमाम जाने-माने और रसूख वाले व्यक्ति इसका विरोध कर रहे थे।[2] सार्वजनिक क्षेत्र में सक्रिय सभी स्त्रियाँ विद्रोहिणी नहीं थीं और इनमें से तमाम स्त्रियाँ भी 'पातिव्रत' और 'स्त्री की अधीनता' जैसे उन्हीं पितृसत्तात्मक आदर्शों से सहमत थीं जिन्हें मुख्यधारा का हिंदी लेखन प्रस्तावित कर रहा था। इन सबमें 'स्त्री शिक्षा' एक ऐसा मसला था जहाँ हिंदी लोकवृत्त में सक्रिय ये स्त्रियाँ सबसे अधिक मुखर थीं और उनके बीच की वैचारिक असहमति सबसे कम थी। यही वह मुद्दा था जिस पर इन सभी स्त्रियों की चिन्ताएँ एक समान दिखती थीं। यह अलग बात है कि हमारे साहित्येतिहासकारों ने स्त्रियों के इस संघर्ष को लेकर अपने अध्ययन में वह जानकारी नहीं दी जिनका हिंदी का पाठक हक़दार था। ऐसा ही एक विवरण हम यहाँ दे रहे हैं। यह 'स्त्री शिक्षा' को लेकर चलने वाली इन तमाम अवधारणात्मक बहसों के बीच खुद स्त्रियों की ओर से किए जाने वाले हस्तक्षेप का एक नमूना है। यह हस्तक्षेप था—स्त्री शिक्षा को भारतेन्दु द्वारा प्रस्तावित 'पति सेवा' और 'शिशुपालन' के दायरे से बाहर खींच लाना और एक विधवा रही स्त्री के द्वारा दूसरी पराश्रित विधवाओं के लिए एक रोज़गारपरक विद्यालय का खोला जाना। 'नारी शिल्पालय' नाम का यह विद्यालय लाहौर में खोला गया था। सच्चिदानन्द सिन्हा ने अपनी पत्रिका 'कायस्थ समाचार' के अप्रैल, 1902 के अंक में स्त्रियों के लिए खोले गए इस तकनीकी विद्यालय 'नारी शिल्पालय' की सूचना देते हुए यह दिलचस्प विवरण लिखा था :

> *इन स्तम्भों में हम पहले भी किसी अवसर पर एक सुशिक्षित और अत्यन्त प्रतिभाशाली स्त्री के रूप में ख्यात श्रीमती हरदेवी रोशनलाल के उन उत्कृष्ट और अत्यधिक उपयोगी कार्यों की ओर ध्यान खींच चुके हैं, जो उन्होंने अपनी पत्रिका 'भारत भगिनी' के ज़रिए 'स्त्री शिक्षा' के लिए किया है, जो हर माह देवनागरी लिपि में प्रकाशित होती है। इस देश के उद्धार और स्त्री शिक्षा के उद्देश्यों के प्रति उनके महान समर्पण और सच्ची सहानुभूति के एक अगले उदाहरण के रूप में हमारे सामने अब लाहौर का "नारी शिल्पालय" (स्त्रियों का टेक्निकल स्कूल) उपस्थित है। यह शिल्पालय बसंत पंचमी के दिन शुरू किया गया और इस संस्था के नियम-क़ायदे, जिन्हें हम नीचे प्रकाशित कर रहे हैं, हमारे पाठकों को इस विद्यालय की उपयोगिता के बारे में कुछ जानकारी दे सकेंगे। यह नियम निम्नलिखित हैं—*
>
> (1) विद्यालय में स्त्रियों को पढ़ाया जाएगा।
> - (A) नागरी, गुरुमुखी और उर्दू लिखना तथा पढ़ना, साथ ही अंकगणित;
> - (B) हाथ तथा मशीन दोनों से सिलाई करना, हर तरह के वस्त्रों को हर शैली में मापना तथा काटना;
> - (C) लेस-वर्क, चाँदी के तारों से क़सीदाकारी करना और हर तरह के रिबन का काम;
> - (D) फुलकारी का काम, साटिन ब्रॉडक्लॉथ आदि रेशमी तथा सूती धागों से क़सीदाकारी;
> - (E) बुनाई, ग़लीचा बनाने का काम, ऊन से क़सीदाकारी और इस काम की सभी शाखाएँ।
>
> (2) प्रवेश हिंदू तथा मुसलमान दोनों विद्यार्थियों के लिए समान रूप से खुला है।
>
> (3) विद्यार्थियों से कोई भी ट्यूशन फ़ीस नहीं ली जाएगी, लेकिन लोकहितैषी और सम्पन्न महिलाओं द्वारा दिए गए दान और सब्स्क्रिप्शन को धन्यवादपूर्वक स्वीकार किया जाएगा।
>
> (4) यह विद्यालय भले घर की उन स्त्रियों के लिए

है जो किसी दूसरे स्कूल में नहीं जा सकती हैं; पर्दे का सख़्ती से पालन होगा; किसी पुरुष को विद्यालय में आने की अनुमति नहीं है।

(5) विद्यालय का प्रबंधन पूरी तरह से स्त्रियों के हाथ में रहेगा।

(6) काम (शिल्पकार्य) के लिए सभी आवश्यक सामग्री विद्यालय के द्वारा दी जाएगी; विद्यार्थियों को उन्हें घर ले जाने की अनुमति नहीं होगी, न ही उन्हें अपने घर से कोई शिल्पकार्य विद्यालय लाकर करने की अनुमति दी जाएगी; जितनी देर तक वे विद्यालय प्रांगण में हैं, उन्हें खुद को उन्हीं कार्यों में लगाए रखना होगा जो उन्हें विद्यालय की तरफ़ से दिए जाएँ।

(7) यह विद्यालय ख़ासतौर पर बढ़िया आचरण वाली उन विधवाओं को शिक्षण और प्रशिक्षण देने के लिए समर्पित रहेगा जिनके पास जीविकोपार्जन का कोई ज़रिया नहीं है। जैसे ही हमारे मित्र इसकी अनुमति देते हैं, ऐसी विधवाओं को हर महीने वज़ीफ़ा भी दिया जाएगा।

(8) फ़िलहाल, यह विद्यालय 11 A.M. से खुलेगा और 3 P.M. पर बंद होगा।

उपरोक्त योजना को कार्यान्वित करते हुए 12 रुपए प्रतिमाह पर एक स्त्री शिक्षिका की नियुक्ति की गई है जिसे पढ़ने, लिखने तथा अंकगणित संबंधी निर्देशन देना है, एक अन्य (शिक्षिका) 15 रुपए प्रतिमाह पर सिलाई के लिए, 4 रुपए प्रतिमाह पर एक स्त्री सहायिका—छात्राओं को उनके घर से लाने-ले जाने हेतु, इसी तरह विद्यालय के कमरों और उपकरणों की सफ़ाई और झाड़-पोंछ के लिए; एक पुरुष चपरासी और चौकीदार को 7 रुपए प्रतिमाह पर विद्यालय से बाहर के काम करने के लिए।

हम इस शिल्पालय की ऑनरेरी सेक्रेटेरी श्रीमती रोशनलाल को शुभकामनाएँ देते हैं, जो अपने सुपरिचित जोश और ईमानदारी के साथ हर दिन विद्यालय के घंटों में इस विद्यालय की देखभाल करने और यहाँ अध्यापन का कार्य करने के लिए भी राज़ी हुई हैं—"समान रूप से हर यूरोपीय और भारतीय स्त्री पुरुष से सहानुभूति और सहायता" की अपील के साथ। और हमें इसमें कोई संदेह नहीं है कि इस अपील का जवाब उसी तरह दिल खोलकर दिया जाएगा, जिसकी यह हक़दार है।[3]

यह उस विद्यालय के खुलने की जानकारी है जिसे श्रीमती हरदेवी ने 1902 में लाहौर में बेरोज़गार विधवा स्त्रियों को ध्यान में रखकर शुरू किया था। उन्नीसवीं सदी का अंत होते-होते एक स्त्री द्वारा इस विद्यालय का खोला जाना दिखलाता है कि स्त्रियों के जीवन से जुड़े प्रश्नों, उनकी आर्थिक आत्मनिर्भरता या पति के समक्ष उनकी दोयम स्थिति-जैसे प्रश्नों पर सार्वजनिक क्षेत्र में सक्रिय वर्चस्वशाली पुरुष अपनी राय चाहे कितने ही आक्रामक तरीक़े से रख रहा हो, वह एकमात्र निर्णयकर्ता नहीं था। स्त्रियाँ पुरुषों द्वारा कही जा रही हर सही-ग़लत बात का सिर झुकाकर पालन नहीं कर रही थीं। स्त्रियों के जीवन को प्रभावित करने वाले विषयों पर स्त्रियों की ओर से होने वाले हस्तक्षेप को लगातार देखा जा सकता था।

'स्त्री शिक्षा' की विभिन्न अवधारणाओं पर मुद्रित सामग्री की छानबीन करते हुए देखा जा सकता है कि 'विधवा जीवन जीने की शिक्षा' और इस संबंध में स्त्रियों पर लादे गए तमाम नियम-क़ायदों के भीतर उन्हें दीक्षित करना 'स्त्री शिक्षा' संबंधी इन पुस्तकों का एक महत्त्वपूर्ण विषय हुआ करता था। इसमें विधवा स्त्रियों को (भले ही वे बाल विधवा हों) शास्त्रों द्वारा बताए गए विधवा जीवन के कठोर नियमों का पालन करने की शिक्षा दी जाती थी। इसके तहत एक वक़्त का फलाहार, मृत पति के चरणों का ध्यान, अपनी यौन इच्छाओं का दमन, घर के दूसरे सदस्यों से दूर रहकर बचा हुआ जीवन बिताने जैसे सुझाव शामिल थे।[4] यहाँ प्रश्न यह है कि क्या वह सलाह सभी स्त्रियों ने उसी तरह मान ली? कुछेक ऊँची कही जाने वाली जातियों को छोड़ दें तो शेष बहुसंख्यक समाज में न तो विधवा विवाह की कोई मनाही थी, न ही यह किताबें और इनमें सिखलाए गए नियमों का वहाँ कोई असर था। सामान्यत: उच्च जातियों की जिन विधवाओं को 'स्त्री शिक्षा' की ये किताबें लक्ष्य कर रही थीं, उन स्त्रियों की ओर से भी इसका प्रतिवाद सामने आया। श्रीमती हरदेवी का 'नारी शिल्पालय' या पंडिता रमाबाई का 'शारदा सदन' रूढ़िवादी समूह की ओर से रखी गई 'स्त्री शिक्षा' की कठोर पितृसत्तात्मक अवधारणा का एक ठोस प्रत्युत्तर था। भले ही व्यावसायिक शिल्पकार्यों पर केंद्रित यह विद्यालय 'उच्च शिक्षा' के उद्देश्यों की पूर्ति नहीं करते थे लेकिन यह स्त्री को परिवार के पुरुषों पर आश्रित गृहिणी या असहाय विधवा की भूमिका से मुक्त कराने में सक्षम थे। स्त्री की यह आर्थिक असहायता समाज में स्त्री की दोयम दर्जे की हैसियत तथा परिवार के भीतर उसके शोषण की मुख्य वजह थी।

'स्त्री शिक्षा' के जिस रूप की वकालत रूढ़िवादी समूह ने हंटर कमीशन के सामने की थी, वहाँ यह माँग की गई थी कि स्कूल में सरकार द्वारा अंग्रेज शिक्षिकाओं की नियुक्ति की जाए जिससे इस देश की लड़कियों को वही शिक्षा दी जा सके जो अंग्रेज स्त्रियों को प्राप्त है[5] जिससे वे अंग्रेज स्त्रियों के समान ही 'कुशल गृहिणी' बन सकें और बच्चों का लालन-पालन आधुनिक मध्यवर्गीय ज़रूरतों के हिसाब से कर सकें। वे घर का हिसाब-किताब करने भर अंकगणित जानें और पति को चिट्ठी लिखने भर भाषा। थोड़ी-सी सिलाई-कढ़ाई भी उन्हें सिखलाई जाए जिससे वे घर पर ही बच्चों के मोज़े तथा टोपी बुन सकें और विक्टोरियन स्त्री की तरह मेज़पोश काढ़कर मध्यवर्गीय बैठकों को सजा सकें। उन्हें 'अनावश्यक विषय' जैसे—विज्ञान और इतिहास (*विद्यांकुर* और *इतिहासतिमिरनाशक*) न पढ़ाए जाएँ।[6] क्योंकि इनका स्त्री शिक्षा के उद्देश्य से कोई लेना-देना नहीं है। न ही उन्हें *प्रेम सागर* जैसा शृंगारिक साहित्य पढ़ाया जाए।[7] हरदेवी और रमाबाई के यह विद्यालय स्त्रियों को उनकी मातृत्व और गृहिणी संबंधी भूमिकाओं से निकलने का अवसर दे रहे थे। यह विद्यालय उन्हें रोज़गार सिखला रहे थे और जीविकोपार्जन में सक्षम बनाना चाह रहे थे। यहाँ भी पाठ्यक्रम जालंधर कन्या विद्यालय की तरह सिलाई-कढ़ाई पर आधारित था[8] लेकिन यहाँ प्रस्तावित शिल्पकार्य की यह शिक्षा छोटी-मोटी घरेलू ज़रूरतों और सजावट तक सीमित नहीं थी बल्कि यहाँ ग़लीचा-क़ालीन से लेकर जरी के काम जैसे औद्योगिक शिल्पकार्य सिखलाए जा रहे थे, जिनकी विदेशी बाज़ार में काफ़ी क़ीमत थी और जिन व्यवसायों से जुड़कर स्त्रियाँ कुछ द्रव्य अर्जित कर सकती थीं। नारी शिल्पालय की पाठ्यचर्या की वह विशेषता जो इसे अपने समय की दूसरी स्त्री शिक्षा-संस्थाओं से अलग करती थी, वह थी—यहाँ के पाठ्यक्रम में गृहिणी धर्म, स्त्री धर्म और पातिव्रत आदि की शिक्षा देने वाले हिंदू शास्त्रों पर आधारित विषयों तथा पुस्तकों का न पढ़ाया जाना। इसी से जुड़ी दूसरी विशेषता इस संस्थान की यह थी कि यहाँ हिंदू तथा मुसलमान दोनों ही शिक्षार्थियों के पढ़ने की व्यवस्था थी और किसी भी तरह की धार्मिक शिक्षा या धर्म-आधारित स्त्री कर्तव्यों की शिक्षा यहाँ नहीं दी जाती थी। रमाबाई के शारदा सदन में भी एक समय ईसाई धर्म की शिक्षाएँ दी जाने लगीं लेकिन ब्रह्मसमाजी हरदेवी ने अपने संस्थान का चरित्र धर्मनिरपेक्ष ही रखा। उन्नीसवीं सदी में आर्यसमा
ब्रह्मसमाज या ईसाई मिशनरी से जुड़े व्यक्ति के लिए
एक कठिन बात रही होगी। प्राय: देखा तो यह गया है
धार्मिक संस्थाओं से जुड़े व्यक्तियों ने तो विद्यालय
ही अपने मतों के प्रचार के लिए थे। ईसाई स्कूलों में
धर्म की शिक्षा दी जाती थी और आर्य समाजी स्कू
वैदिक धर्म की। ऐसे समय में एक स्त्री द्वारा एक धर्मि
और रोज़गार केंद्रित शिक्षा संस्थान का खोला जाना
आप में विशिष्ट था।

यह ध्यान रखने की ज़रूरत है कि इन स्त्री स
द्वारा खोले गए विद्यालयों की यह 'रोज़गारपरक शि
पुरुषों को नौकरी के क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा देने वाली
और 'भले घर की स्त्रियाँ', 'परदा', 'नैतिक चरित्र
आग्रह यहाँ भी स्त्रियों के लिए ज़रूरी ठहराए ज
इतना होने पर भी यह विद्यालय स्त्रियों को आर्थिक
आत्मनिर्भर बनाने के अपने उद्देश्य के कारण वि
हरदेवी का यह विद्यालय स्त्री शिक्षा के सुधारवाद
को कार्यान्वित कर रहा था। एक स्त्री द्वारा खो
विद्यालय का प्रबंधन, संचालन और अध्यापन
स्त्रियों के हाथ में था। सार्वजनिक मंच से विद्या
देने की जो अपील की, वह भी केवल महिल
गई थी। इसका वास्तविक असर क्या रहा होगा
में आँकड़े उपलब्ध नहीं हैं; लेकिन इतना तो
सकता है कि रूढ़िवादी लेखकों के द्वारा 'स्त्री
किताबें लिखकर स्त्रियों को उनकी दोयम हैसि
करने और पितृसत्ता द्वारा बताए गए 'नारीधम
करने की नसीहतों का यह एक ठोस प्रत्युत्तर
सरकार द्वारा खोले गए समान पाठ्यचर्या वाले
उच्च शिक्षा संस्थान में जाना स्त्रियों के लिए न
में जाने से बेहतर विकल्प था। लेकिन हरदेवी
विद्यालय केवल उन्हीं स्त्रियों के लिए खोला
दूसरे स्कूल में नहीं जा सकती थीं।'

उन्नीसवीं सदी के 'हिंदी नवजागरण'
को लेकर चली बहसों में स्त्रियों की ओर
पक्ष क्या था और खुद स्त्रियों ने इस दिशा
किए—उन्हें संज्ञान में लिए बिना न तो भा
'स्त्री शिक्षा' संबंधी विचारों को ठीक से स
है, न ही औपनिवेशिक शिक्षा तंत्र में सि
संबंधी नीतियों पर कोई राय बनायी जा स

हुआ होगा। इस पुस्तक की लेखिका श्रीमती हरदेवी, वही हरदेवी हैं जिनकी लिखी बहुत मशहूर पुस्तक लन्दन यात्रा के अलावा 'स्त्रियों पै सामाजिक अन्याय' जो कि नागरी, उर्दू और अँग्रेजी तीनों भाषाओं में प्रकाशित हुई। इनका प्रकाशन मुंशी शादीलाल वर्मा मैनेजर 'भारत भगिनी', इलाहाबाद के प्रबन्ध से हुआ था...इस पुस्तक के माध्यम से इसकी लेखिका श्रीमती हरदेवी अपने पाठकों, विशेषकर स्त्रियों को यह सन्देश देने का प्रयास करती हैं कि पुरुषों से अपनी अस्मत इसकी मुख्य पात्र हुक्मदेवी की तरह, किस तरह बचाना चाहिए। हालाँकि इसके माध्यम से हमें उस समय के पुरुष प्रधान समाज और उसकी सोच का पता चलता है। इतना ही नहीं यह पुस्तक हमें यह भी बताती है कि उस समय विधवाओं का जो दैहिक शोषण होता था, उसमें कहीं न कहीं स्वयं स्त्रियों की भी भूमिका होती थी।''

हरदेवी ने हिन्दी पत्रिका 'भारत भगिनी' का सम्पादन भी किया, उन्होंने सभाओं के आयोजन किये, फंड एकत्र करने के लिए, समाज-सुधार व राजनीतिक कैदियों की मदद के लिए अभियान जारी रखे। 'सुगृहिणी पत्रिका' के जुलाई अंक में श्रीमती हरदेवी के लन्दन से लौटने का समाचार छपा। 'सुगृहिणी' के समालोचना शीर्षक के अन्तर्गत 'भारत भगिनी' का परिचय दिया गया—''इस मासिक पत्रिका की सम्पादिका हमारी परम मान्या श्रीमती हरदेवी जी हैं, इस साल की पहली जून (1889) से इस अवलोकित मनोरंजिनी पत्रिका का प्रकाशन लाहौर नगर से आरम्भ हुआ है।'' 'भारत भगिनी' 1906 तक प्रकाशित हुई। स्त्री जागरण और स्त्रियों में साहित्यानुराग उत्पन्न करने में इस पत्रिका ने महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

सच्चिदानन्द सिन्हा ने अपनी पत्रिका 'कायस्थ समाचार' के अप्रैल 1902 के अंक में स्त्रियों के लिए स्थापित किये गये इस तकनीकी विद्यालय 'नारी शिल्पालय' की सूचना देते हुए यह विवरण लिखा—''इन स्तम्भों में हम पहले भी किसी अवसर पर एक सुशिक्षित और अत्यन्त प्रतिभाशाली स्त्री के रूप में ख्यात श्रीमती हरदेवी रोशनलाल के उन उत्कृष्ट और अत्यधिक उपयोगी कार्यों की ओर ध्यान खींच

चुके हैं, जो उन्होंने अपनी पत्रिका 'भारत भगिनी' के जरिये 'स्त्री शिक्षा' के लिए किया है, जो हर माह देवनागरी लिपि में प्रकाशित होती है। इस देश के उद्धार और स्त्री शिक्षा के उद्देश्यों के प्रति उनके महान् समर्पण और सच्ची सहानुभूति के एक अगले उदाहरण के रूप में हमारे सामने अब लाहौर का 'नारी शिल्पायन' (स्त्रियों का टेक्निकल स्कूल) उपस्थित है। यह शिल्पायन बसन्त पंचमी के दिन शुरू किया गया और इस संस्था के नियम-कायदे, जिन्हें हम नीचे प्रकाशित कर रहे हैं, हमारे पाठकों को इस विद्यालय की उपयोगिता के बारे में कुछ जानकारी दे सकेंगे। यह विषय निम्नलिखित हैं—

1 विद्यालय में स्त्रियों को पढ़ाया जाएगा
   (अ) नागरी, गुरुमुखी और उर्दू लिखना तथा पढ़ना, साथ ही अंकगणित;
   (ब) हाथ तथा मशीन दोनों से सिलाई करना, हर तरह के वस्त्रों को हर शैली में मापना तथा काटना;
   (स) लेस वर्क, चाँदी के तारों से कसीदाकारी करना और हर तरह के रिबन का काम;
   (द) फुलकारी का काम, साटिन ब्राडक्लाथ आदि रेशमी तथा सूती धागों से कसीदाकारी;
   (य) बुनाई, गलीचा बनाने का काम, ऊन से कसीदाकारी और इस काम की सभी शाखाएँ।
2 प्रवेश हिन्दू तथा मुसलमान दोनों विद्यार्थियों के लिए समान रूप से खुला है।
3 विद्यार्थियों से कोई भी ट्यूशन फीस नहीं ली जाएगी, लेकिन लोकहितैषी और सम्पन्न महिलाओं द्वारा दिये गये दान और सब्सक्रिप्शन को धन्यवादपूर्वक स्वीकार किया जाएगा।
4 यह विद्यालय भले घर की उन स्त्रियों के लिए है जो किसी दूसरे स्कूल में नहीं जा सकती हैं; परदे का सख्ती से पालन होगा; किसी पुरुष को विद्यालय में आने की अनुमति नहीं है।

5 विद्यालय का प्रबन्धन पूरी तरह से स्त्रियों के हाथ में रहेगा।

6 काम (शिल्पायन) के लिए सभी आवश्यक सामग्री विद्यालय के द्वारा दी जाएगी; विद्यार्थियों को उन्हें घर ले जाने की अनुमति नहीं होगी, न ही उन्हें अपने घर से कोई शिल्पकार्य विद्यालय लाकर करने की अनुमति दी जाएगी; जितनी देर तक वे विद्यालय प्रांगण में हैं, उन्हें खुद को उन्हीं कार्यों में लगाये रखना होगा जो उन्हें विद्यालय की तरफ से दिये जाएँ।

7 यह विद्यालय खासतौर पर बढ़िया आचरण वाली उन विधवाओं को शिक्षण और प्रशिक्षण देने के लिए समर्पित रहेगा जिनके पास जीविकोपार्जन का कोई जरिया नहीं है। जैसे ही हमारे मित्र इसकी अनुमति देते हैं, ऐसी विधवाओं को हर महीने वजीफा भी दिया जाएगा।

8 फिलहाल, यह विद्यालय 11 a.m. से खुलेगा और 3 p.m. पर बन्द होगा।

उपरोक्त योजना को कार्यान्वित करते हुए 12 रुपये प्रतिमाह पर एक स्त्री शिक्षिका की नियुक्ति की गयी है जिसे पढ़ने, लिखने तथा अंकगणित सम्बन्धी निर्देशन देना है, एक अन्य (शिक्षिका) 15 रुपये प्रतिमाह पर सिलाई के लिए, 4 रुपये प्रतिमाह पर एक स्त्री-सहायिका छात्राओं को उनके घर से लाने-ले जाने हेतु, इसी तरह विद्यालय के कमरों और उपकरणों की सफाई और झाड़-पोंछ के लिए; एक पुरुष चपरासी और चौकीदार को 7 रुपये प्रतिमाह पर विद्यालय से बाहर के काम करने के लिए।

हम इस शिल्पायन की ऑनरेरी सेक्रेटरी श्रीमती रोशनलाल को शुभकामनाएँ देते हैं, जो अपने सुपरिचित जोश और ईमानदारी के साथ हर दिन विद्यालय के घण्टों में इस विद्यालय की देखभाल करने और यहाँ अध्यापन का कार्य करने के लिए भी राजी हुई हैं, "समान रूप से हर यूरोपीय और भारतीय स्त्री-पुरुष से सहानुभूति और सहायता की अपील के साथ। और हमें इसमें कोई सन्देह नहीं है कि इस अपील का जवाब उसी तरह दिल खोलकर दिया जाएगा, जिसकी

26 / हरदेवी की यात्रा

यह हकदार है।[8]

जैसाकि पहले कहा जा चुका है हरदेवी सम्भवतः टीचर्स ट्रेनिंग के लिए लन्दन गयी थीं। वहीं पर उनकी मुलाकात रोशनलाल से हुई थी। हरदेवी ने 'लन्दन यात्रा' शीर्षक वृत्तान्त 1888 में छपवाया। 'लन्दन यात्रा' के प्रारम्भ में ही वे यह स्पष्ट कर देती हैं कि यह वृत्तान्त उन्होंने अपनी भारतीय भगिनियों के लिए छपवाया है। भूमिका में ही हरदेवी कहती हैं—"प्यारी पाठिकाओ आज मैं अपनी यात्रा का वृत्तान्त लेकर तुम्हारी सेवा में उपस्थित हुई हूँ।"

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध तक आते-आते 'नयी स्त्री' के निर्माण की चिन्ता पूरे राष्ट्रवादी विमर्श के केन्द्र में आ गयी थी। यह वही समय था जब भारतीय समाज में स्त्री की स्थिति एक राजनीतिक मुद्दा और विवादों का केन्द्र बन गयी थी। ब्रिटिश प्रभुओं की दृष्टि में स्त्री की स्थिति 'आधुनिकता' का पैमाना थी। स्वशासन के लिए उत्सुक भारतीयों के सामने वे स्त्रियों की गर्हित स्थिति दिखाकर उन्हें बताने में कामयाब हो गये थे कि भारतीय इतने पिछड़े हुए हैं कि वे अपने समाज, अपने सामाजिकों को स्वयं नहीं सँभाल सकते, सती प्रथा, बहु-विवाह, कन्या भ्रूण हत्या, पर्दा और बाल-विवाह अँग्रेजों की आलोचना का मुद्दा था। जबकि भारतीय समाज सुधारकों में से अधिकांश की दृष्टि में पाश्चात्य संस्कृति की अपेक्षा भारतीय संस्कृति उत्कृष्ट थी, लेकिन इसके साथ ही इस बात की भी जरूरत महसूस की गयी कि पश्चिमी प्रभुओं की आलोचना से बचने के लिए हिन्दू संस्कृति में कुछ सुधार और बदलाव किये जाएँ। पश्चिमी उदारवाद और मानववाद को इस ढंग से प्रतिस्थापित किया जाए कि अँग्रेज भारत को हेय दृष्टि से देखना छोड़ दें। पश्चिमी सभ्यता में नयी तकनीक, विज्ञान और तर्क का प्राधान्य था तो उसकी तुलना में भारतीयों के पास आध्यात्मिक उच्चता थी। आध्यात्मिकता को भारतीयों की वास्तविक पहचान के तौर पर देखा गया। (चटर्जी, 1989 : 23) स्त्रियाँ इसी 'आध्यात्मिक स्पेस' की पहरेदार थीं। अब समाज सुधारकों और नेतृत्व करने वालों के सामने इस आध्यात्मिक

आमुख / 27

चित्र - १, २ ,३,४

नीचे कायस्थ समाचार की मूल प्रति का चित्र दे रहा हूँ। जिसका चारु ने बड़ी मेहनत से अनुवाद किया था। कोई भी पूछ सकता है कि अगर गरिमा जी यहाँ चारु के लेख का संदर्भ दे ही देती तो उनका क्या बिगड़ जाता? उसका कारण शायद यह है कि श्रीमती हरदेवी से जुड़े गरिमा जी के लेखन और प्रकाशन की मौलिकता का दावा ध्वस्त हो जाता। कोई भी पाठक जो चारु सिंह द्वारा आलोचना पत्रिका में हरदेवी पर लिखे उसके दोनों लेख पढ़ेगा, उसे गरिमा जी के लिखे को पढ़ने की ज़रूरत महसूस नहीं होगी, क्योंकि इसमें कुछ भी नया नहीं है। सिवाय लंदन जुबिली पुस्तिका के जो उस समय चारु को नहीं मिल पायी थी।

a long ...

— * * * —

We have on a previous occasion drawn attention, in these columns, to the excellent and highly useful work that Mrs. Hardevi Roshan Lal, well-known as an educated and highly talented lady, was doing in the department of female education through the medium of her journal, *Bharat Bhagini*, which is a monthly printed in the Devanagri character. In the Nari Shilpalaya, (Technical School for Women), Lahore, we have yet another example of her great devotion and sincere sympathy with the cause of female education and emancipation in this country. This Shilpalaya, was opened on the last Basant Panchami day, and the rules of the institution which we are publishing below will give our readers some idea of the usefulness of the school. The rules are as follows :—

Mrs. Roshan Lal and the Nari Shilpalaya, Lahore.

(1) In this school women shall be taught :—

(*a*) reading and writing Nagri, Gurmukhi and Urdu, as well as Arithmetic;

(*b*) sewing with the hand as well as by machine, all kinds of clothes, including measuring and cutting in all styles ;

(*c*) lace-work, and embroidering with silver thread and ribbon of all kinds ;

(*d*) phulkari-work, and embroidering on satin, broad-cloth, &c., &c., with silk and cotton thread;

(*e*) knitting, carpet-work, and embroidering with wool in all its branches.

(2) Admission is open alike to Hindu and Muhammedan pupils.

(3) Pupils will not be charged any tuition fees, but subscriptions and donotions from public spirited and well-to-do ladies will be thankfully received and acknowledged.

(4) The school is meant for those women of good families who cannot go to any other school; *strict pardah is observed; no male is allowed to enter the school.*

(5) The conduct of the school rests entirely in the hands of ladies.

(6) All necessary materials for work will be supplied by the school; pupils will not be permitted to take them home, nor shall they be permitted to bring work from their homes and do it in school; so long as they are in the school premises, they shall have to occupy themselves with work given out to them by the school.

(7) The School will devote itself in a special manner to the instruction and training of those widows of good character who have no means of livelihood. Monthly stipends will all also be given to such widows, as soon as our friends permit of this being done.

(8) For the present, the school will begin at 11 A. M., and close at 3 P. M.

To give effect to the above programme one female teacher has been engaged on Rs. 12 per month to give instruction in reading, writing, and arithmetic; another on Rs. 15 to teach sewing; a female attendant on Rs. 4 per month to accompany pupils to and from their homes, as well as to clean and dust school rooms and appliances; and one male *Chaprasi* and *Chaukidar* on Rs. 7 per month for work out-side the school premises.

We heartily join with Mrs. Roshan Lal, the Honorary Secretary of the Shilpalaya who has with her usual zeal and earnestness agreed to teach and look after the school every day during school hours, in appealing "to all public spirited ladies and gentlemen, European and Indian alike, for sympathy and support," and have no doubt that the appeal will be responded to as heartily as it deserves.

— * * * —

यहाँ एक बात कहनी जरूरी है कि हरदेवी के यात्रावृत्त का छपना स्वागत योग्य है और गंभीर शोधार्थियों के लिए वक़्त और संसाधन दोनों को बचाने का काम करेगा। इसके बावजूद गरिमा श्रीवास्तव द्वारा इस पुस्तक की लिखी भूमिका, समालोचन वेबसाइट और आजकल आदि में प्रकाशित-पुनर्प्रकाशित हरदेवी संबंधी उनका लेख, एक मौलिक शोध की नकल भर है। तीसरा उदाहरण देखिए। आप अपना सर पीट लेंगे।

कायस्थ समाचार और टेंपरेंस आंदोलन पर लूसी कैरोल का शोध क्लासिक माना जाता है। लूसी कैरोल का शोध भी सबके लिए उपलब्ध है। चारु ने तलवार जी की किताब रस्साकशी से उसका संदर्भ जाना और उनके शोध को पूरा पढ़ा। उचित होता कि गरिमा जी ने भी यही किया होता। जब वे लूसी कैरोल का संदर्भ दे रही हैं तो दावा तो यही होगा। दिए गए चित्र ५,६,७,८ गरिमा जी की पुस्तक, उनके लेख और चारु के लेख से हैं। इन्हें जरा पढ़िए। पहले चित्र -७ में चारु ने जो लिखा है उसे पढ़कर देखिए। उसके बाद गरिमा जी के लिखे को देखिए हुबहू, शब्द-दर-शब्द, वाक्य-दर-वाक्य मिला लीजिए।

सबसे हास्यास्पद है जब लूसी कैरोल के कोटेशन मार्क के अंदर गरिमा जी ने चारु का विश्लेषण चस्पा कर दिया है और संदर्भ लूसी कैरोल का दे दिया है। इन्हें इसका बोध तक नहीं है कि कहाँ चारु का विश्लेषण ख़त्म होता है और लूसी कैरोल का शुरू होता है। संदर्भ और पृष्ठ संख्या चारु के लेख की संदर्भ सूची में मौजूद थे। चित्र संख्या 5 को देखिए। मैं दावा करता हूँ ऐसा संदर्भ आपने अपने अकादमिक जीवन में नहीं देखा होगा। सी वॉयेज कंट्रोवर्सी वाला लेख और और हिंदुस्तानी कायस्थ पर किया गया शोध दो चीजें हैं, इसका बोध भी गरिमा जी को नहीं है।

यही यह सवाल भी उठता है कि क्या गरिमा जी अपने पाठकों को मूर्ख समझती हैं या उन्हें इस तरह के नक़ल की आदत रही है। कोई भी सावधान पाठक देख लेगा की संदर्भ के भीतर संदर्भ देने की कोई शैली नहीं होती। खैर इन सब बातों की ज़रूरत नहीं पड़ती अगर वह उस लेख का संदर्भ देतीं जहाँ से सूचना और विश्लेषण कॉपी कर रही थीं। कम से कम किताब की सन्दर्भ सूची में ही चारु के लेख का सन्दर्भ दे देतीं। वह भी इनसे न हो सका। ऐसा उन्होंने क्यूँ किया इसकी संभावना पर अंत में बात करेंगे।

चित्र-५- समालोचन में प्रकाशित गरिमा श्रीवास्तव का शोध

21/10/24, 4:

की यात्रा: गरिमा श्रीवास्तव | समालोचन

21/10/24, 4:57 PM

उपलक्ष्य में आयोजित एक राष्ट्रीय संगोष्ठी (27-28 दिसंबर 2022) में प्रस्तुत अपने पर्चे में एक दुर्लभ दस्तावेज के हवाले से यह सिद्ध कर दिया कि हरदेवी ही 'सीमंतनी उपदेश' की लेखिका थीं और उन्होंने ही 'सीमंतनी संगीत' की भी रचना की थी, जो अनुपलब्ध है.

हरदेवी ने आत्मकथा भी लिखी थी जो उर्दू में थी, लेकिन उसकी कोई प्रति अभी तक हमें उपलब्ध नहीं हो सकी है. इस बात के प्रमाण मिलते हैं कि हरदेवी ने पुनर्विवाह किया था-

"लन्दन से लौटकर हरदेवी ने एक और दुस्साहसी कदम उठाया. यह था उच्च जाति की एक हिन्दू विधवा का प्रेम विवाह. बरेली निवासी रोशनलाल लन्दन से 1887 में बैरिस्टरी की पढ़ाई करके लौटे. यह इलाहाबाद हाईकोर्ट में वकालत कर रहे थे. रोशनलाल सक्सेना कायस्थ थे और अपने स्कूल के दिनों से ही आर्यसमाजी थे. लन्दन में पढ़ाई करने वाली हरदेवी से उनका परिचय उसी दौरान हुआ था. लूसी कैरोल ने 'द हिन्दुस्तानी कायस्थ 'में हरदेवी तथा रोशनलाल की लन्दन से चली आती मित्रता का ज़िक्र किया है. उन्होंने यह भी बताया है कि एडवोकेट रोशनलाल ने समुद्रयात्रा से लौटकर प्रायश्चित करने से इनकार कर दिया था. कायस्थ समाज ने उन्हें स्वीकार भी कर लिया था." (द सी वॉयेज कंट्रोवर्सी एंड द कायस्थ्स आफ़ नार्थ इंडिया– मॉडर्न एशियन स्टडीज़, 1979,वॉल्यूम 13,नंबर 2. pp 265-299)

हरदेवी के नाम से से जो रचनाएं मिलती हैं उनमें दो यात्रा-वृत्तांतों के अतिरिक्त 'स्त्री विलाप', हुक्मदेवी, स्त्रियों पै सामाजिक अन्याय ' शीर्षक विनिबंध हैं. हरदेवी के पिता का नाम रायबहादुर कन्हैयालाल था. उनकी ख्याति इतिहासकार और भवन निर्माता के रूप में थी. उन्होंने अपनी पुत्री हरदेवी और पुत्र सेवालाल को अच्छी शिक्षा दी.

'तारीख-ए-लाहौर' की भूमिका में अपना परिचय देते हुए रायबहादुर कन्हैयालाल खुद को लाला हरनारायण कायस्थ जलेसरी हाल-ए-मुवत्तिन शहरे लाहौरी'[ii] बताया है.

लार्ड नार्थब्रुक ने उन्हें 'राय बहादुर' की उपाधि प्रदान की थी. हरदेवी अनुमानतः 1863 में जन्मी होंगी क्योंकि 1905 में छपे एक दस्तावेज में उन्हें 42 वर्ष का बताया गया है[iii] हरदेवी बाल विधवा थीं और बैरिस्टर रोशनलाल से उनका दूसरा विवाह हुआ था[iv].

हरदेवी के यात्रा-वृत्तान्त पर विचार करने से पहले उनकी समकालीन यात्रा वृत्तान्तकारों पर एक दृष्टि डाल लेना समीचीन होगा. ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के दौरान समाज में आर्थिक और राजनीतिक पुनर्संरचना की प्रक्रिया देखी जा रही थी. भारतीय मध्यवर्ग और ब्रिटिश नागरिकों के आपसी संबंधों के समीकरण बदल रहे थे, आपस में आदान-प्रदान की प्रक्रिया में पहले की

tps://samalochan.com/hardevi/

Page 3 of 2?

चित्र-६ लगभग वही हिस्सा 'हरदेवी की यात्रा' पुस्तक की भूमिका में, पृष्ठ १६

रचनाकार है। इस ...

सीमंतनी उपदेश की 'एक अज्ञात हिन्दू औरत' दरअसल श्रीमती हरदेवी ही थी।

हरदेवी ने आत्मकथा भी लिखी थी जो उर्दू में थी, लेकिन उसकी कोई प्रति अभी तक हमें उपलब्ध नहीं हो सकी है। इस बात के प्रमाण मिलते हैं कि हरदेवी ने पुनर्विवाह किया था—'लन्दन से लौटकर हरदेवी ने एक और दुस्साहसिक कदम उठाया। यह था उच्च जाति की एक हिन्दू विधवा का प्रेम विवाह। बरेली निवासी रोशनलाल लन्दन से 1887 में बैरिस्टरी की पढ़ाई करके लौटे। यह इलाहाबाद हाईकोर्ट में वकालत कर रहे थे। रोशनलाल सक्सेना कायस्थ थे और अपने स्कूल के दिनों से ही आर्यसमाजी थे। लन्दन में पढ़ाई करने वाली हरदेवी से उनका परिचय उसी दौरान हुआ था। लूसी कैरोल ने 'द हिन्दुस्तानी कायस्थ' में हरदेवी तथा रोशनलाल की लन्दन से चली आती मित्रता का जिक्र किया है। बैरिस्टर रोशनलाल ने समुद्रयात्रा से लोटकर प्रायश्चित करने से इनकार कर दिया था। कायस्थ समाज ने उन्हें स्वीकार भी कर लिया था। (द सीवॉयेज कण्ट्रोवर्सी एण्ड द कायस्थ्स ऑफ़ नार्थ इण्डिया—मॉडर्न एशियन स्टडीज़, 1979, वॉल्यूम 13 नम्बर 2 पृ. 265-299)

चित्र -५,६

चित्र -७, आलोचना २०१६ में प्रकाशित चारु सिंह के लेख से

"सम्पादिका श्रीमती हरदेवी—धर्मपत्नि मि. रोशनलाल बी. ए. ब्यारिस्टर एट ला मंत्री श्रीमती आर्य्या प्रतिनिधि सभा पंजाब भाटी दरवाज़ा—लाहौर"।

लंदन से लौटकर हरदेवी ने एक और दुस्साहसी क़दम उठाया। यह था, उच्च जाति की एक हिंदू विधवा का प्रेम-विवाह। बरेली निवासी रौशनलाल लंदन से 1887 में बैरिस्टरी की पढ़ाई करके लौटे। यह इलाहाबाद हाईकोर्ट में वकालत कर रहे थे। रोशनलाल सक्सेना कायस्थ थे और अपने स्कूली दिनों से ही आर्यसमाजी थे। लंदन में पढ़ाई करने गईं हरदेवी से उनका परिचय उसी दौरान हुआ था। लूसी कैरोल हरदेवी तथा रोशनलाल की लंदन से चली आ रही मित्रता का ज़िक्र करती हैं।[42] 1889 में जब हरदेवी के भाई बैरिस्टर सेवाराम की भी मृत्यु हो गई, संभवतः उस वक़्त हरदेवी ने रौशनलाल के साथ विवाह करने का निर्णय लिया।[43] जिसकी ख़बर लाहौर ट्रिब्यून, पंजाब-पैट्रियट तथा इंडियन मैगज़ीन जैसी पत्र-पत्रिकाओं में छपी।[44] अपेक्षाकृत आधुनिक हो रहे कायस्थ समुदाय में जहाँ समुद्र-यात्रा निषेध जैसी दूसरी तरह की रूढ़िवादिता का विरोध होने लगा था वहाँ भी 'विधवा-विवाह' की इस घटना पर तत्काल प्रतिक्रिया हुई और कायस्थ जाति के भीतर ही विवाह करने के बावजूद रौशनलाल को जाति बहिष्कृत कर दिया गया। लखनऊ के कश्मीरी ब्राह्मण विशन नारायण धर ने अपने एक पर्चे में 1887 में रौशनलाल के भारत लौटने के बाद की घटनाओं पर टिप्पणी की है। वे लिखते हैं,

"श्री रोशनलाल, बैरिस्टर-एट-लॉ, एक कायस्थ, बिना किसी विरोध के अपनी जाति में स्वीकार कर लिए गए। निश्चित रूप से उनकी जीवन शैली को लेकर कुछ सवाल उठे, लेकिन उन्होंने केवल टाल-मटोल की रणनीति से अपने जाति-भाइयों को संतुष्ट कर लिया तथा उन्हें सोंचने पर सहमत किया कि वे अब भी उतने ही रूढ़िवादी हैं, जितने इंग्लैंड जाने से पहले थे। जाति के प्रश्न पर उनके विरुद्ध किसी प्रत्यक्ष प्रमाण के अभाव में, उनके लोगों ने उनके पक्ष में फ़ैसला दिया।"[45]

इससे मालूम होता है कि नवम्बर 1889 में लंदन की कार्लाइल सोसाइटी में यह पर्चा पढ़े जाने तक रौशनलाल को जाति-बहिष्कृत नहीं किया गया था। जबकि सी.ए. बेली 1890 के लाहौर ट्रिब्यून की एक ख़बर का हवाला देते हुए बताते हैं कि विधवा हरदेवी से विवाह करते ही रौशनलाल को तत्काल जात-बाहर कर दिया गया था,

"रौशनलाल, एक सक्सेना कायस्थ, जो कि इंग्लैण्ड से वकालत पढ़कर आए थे और जिन्होंने 1887 से थोड़े समय के लिए इलाहाबाद में वकालत की थी, एक समाज सुधारक तथा गोरक्षा प्रचारक के रूप में प्रसिद्ध होकर उन्होंने प्रांत के बाहर भी बहुत से सम्पर्क बना लिए थे, ख़ासकर लाहौर हिंदू सभा में। पहली-पहल, समुद्री यात्रा के बावजूद अपनी जाति में वापस स्वीकार कर लिए गए, (लेकिन) एक भटनागर कायस्थ विधवा से विवाह का परिणाम तत्कालीन जाति बहिष्करण के रूप में सामने आया।"[46]

इससे लगता है कि 1889-1890 के दौरान यह विवाह हुआ होगा। विवाह के बाद रोशनलाल लाहौर में बस गए और उन्होंने यहीं पर वकालत शुरू की और सम्भवतः यही कारण है कि 'भारत भगिनी' को इलाहाबाद से लाहौर ले जाया गया जिसकी सूचना इसी वर्ष प्रारम्भ हुई स्त्रियों की पत्रिका 'सुगृहणी' में हेमंतकुमारी चौधरी ने प्रकाशित की :

"भारत-भगिनी" इस पत्रिका की संपादिका हमारी परम मान्या श्रीमती हरदेवी जी हैं। इस साल पहली जून से इस अवलोचित पत्रिका का प्रकाशन लाहौर नगर से आरम्भ हुआ है।"

शीघ्र ही रौशनलाल लाहौर आर्यसमाज के प्रभावशाली कार्यकर्ता बन कर उभरे और बच्छोवाली स्थित लाहौर आर्यसमाज के मंत्री भी चुने गए, किंतु रौशनलाल ने आर्यसमाज की क़ानूनी सहायता करना अधिक उपयुक्त समझा और ख़ुद को आर्यसमाज के सांगठनिक कार्यों से दूर ही रखा, जहाँ आए दिन लाठियाँ चल जाया करती थीं। हरदेवी का परिचय भी "श्रीमती आर्य प्रतिनिधि सभा की मंत्री" के बतौर मिलता है, हालाँकि वे ब्रह्मसमाजी थीं। यह भी हरदेवी के व्यक्तित्व की एक अद्भुत विशेषता है। 'गाय, साँप, चील, उल्लू' की पूजा करनेवाले हिंदुओं से असहमति जताते हुए भी; वे 'गोरक्षा आंदोलन' के कार्यकर्ता आर्यसमाजी रौशनलाल से विवाह कर सकती थीं, बनारस के सनातनी पंडित सरयू प्रसाद मिश्र के पोते की परवरिश कर सकती थीं, स्वामी शिवज्ञान चाँद के 'धर्म महोत्सवों' में लेक्चर दे सकती थीं, रमाबाई के मिशनरी कार्यों की प्रशंसा कर सकती थीं और हर पंथ का सम्मान करते हुए उसकी कठोर आलोचना कर सकती थीं।[47] उनकी यह विशेषता उन्हें अपने युग की एकमात्र ऐसी शख़्सियत से जोड़ती थी जिसके लिए पंथ नहीं तर्क महत्वपूर्ण था। वह थे, कन्हैयालाल अलखधारी जिन्होंने 'औरतों के वास्ते बेहितर समझ के' मुफ़्त वितरण के लिए 'एक विधवा युवती' की लिखी पुस्तक 'सीमंतनी उपदेश' को प्रकाशित कराया था।

चित्र -८, आलोचना २०१६ में प्रकाशित लेख की विस्तृत संदर्भ सूची में लूसी कैरोल

हरदेवी की यात्रा पुस्तक में पृष्ठ 10 पर गरिमा जी लिखती हैं, "अनुमान है कि उच्च शिक्षा के लिए लन्दन जाने वाली वे पहली हिन्दीभाषी स्त्री थीं।"[7] लेकिन इसका न तो कोई संदर्भ दिया है, न यह बतलाने का प्रयास किया गया है कि हरदेवी उच्च शिक्षा के लिए ही लंदन गई थीं, इस जानकारी का स्रोत क्या है? इसकी वजह यह है कि यह वाक्य सीधे चारु के शोधालेख से ले लिया गया है।

हरदेवी पहली हिंदीभाषी महिला थीं जो पढ़ाई के लिए लंदन गईं थी यह कितनी महत्वपूर्ण बात है इसका अंदाज़ा पाठक लगा सकते हैं। लेकिन यह लिखना जितना आसान है उसे साबित करना बहुत ही श्रमसाध्य कार्य है। बिना प्रमाण और संदर्भ के इसे कोई स्वीकार नहीं कर सकता। इस तरह के एक असाधारण निष्कर्ष तक पहुँचने के लिए चारु ने न जाने कितने संदर्भ जुटाए थे।

यह चित्र देखिए कैसे बिना संदर्भ दिए इस सूचना को उठा लिया गया है । ठीक ऐसी ही एक बहुत महत्वपूर्ण सूचना यह भी

---

[7] **पृष्ठ १४**

कालापानी को पार किया, और इसके लिए वे अतिरिक्त श्रेय की हक़दार हैं क्योंकि उनके क्षेत्र की महिलाएँ बहुत ही पिछड़ी दशा में हैं और शायद ही कभी परदे से बाहर निकलती हैं।''[13]

आख़िर कौन थी यह महिला ?

आधुनिक लाहौर की अनेक ख़ूबसूरत इमारतों के निर्माता, लेखक तथा इतिहासकार रायबहादुर कन्हैयालाल की पुत्री हरदेवी उच्च शिक्षा के लिए इंग्लैण्ड जाने वाली संभवतः प्रथम हिंदीभाषी महिला थीं। स्त्री शिक्षा के प्रचार के लिए समर्पित श्रीमती हरदेवी की सार्वजनिक उपस्थिति पहली बार 'लंदन-यात्रा' के साथ ही दिखाई देती है, जहाँ वे बच्चों (सम्भवतः बालिकाओं) की शिक्षा से सम्बंधित किंडरगार्टेन पद्धतियों का अध्ययन करने गई थीं। जहाँ से लौटकर उन्होंने अंग्रेज़ी तथा देशी भाषाओं में अनेक पैमफ़्लेट—पुस्तिकाएँ प्रकाशित कीं तथा 'स्त्री शिक्षा को समर्पित' मासिक पत्र 'भारत भगिनी' को इलाहाबाद से निकालना शुरू किया जिसे बाद में ये लाहौर ले आई थीं।

चित्र ९

"हरदेवी क्रांतिकारियों की सहायता करती थीं।"[8] जब देश में क्रांतिकारी गतिविधियां शुरू हो रही थी उस समय हरदेवी ने क्रांतिकारियों की सहायता करना शुरू किया यह सीधे देशद्रोह था। उस समय ऐसे कितने

[8] **गरिमा श्रीवास्तव की उपरोक्त पुस्तक में पृष्ठ १५**

साहित्यकार और सुधारक थे जो यह जोखिम ले रहे थे? इसे बिना प्रमाणों के कोई नहीं स्वीकार करेगा। लेकिन गरिमा श्रीवास्तव ने यह बात किस आधार पर कही? इसके लिए कृपया आप चित्र-१०, चित्र ११ में

एसोसिएशन ... केगन पाल एंड कम्पनी, पृ. 624–
नवम्बर 1881, लंदन, सी. केगन पाल एंड कम्पनी, पृ. 624–630

38. 'स्त्री विलाप', पृ. 10–12
39. 'सीमंतनी उपदेश', पृ. 99
40. "श्रीमती हरदेवी ने ख़ुद को अपनी देशवासी बहनों की उन्नति के काम में लगा दिया और फिर ज़नाना में भेजने के लिए एक उपयोगी पत्रिका निकाली"; 'द इंडियन मैग्जीन एंड रिव्यू' 1892, पृ. 660; लूसी कैरोल ने 11 अगस्त 1894 के लाहौर ट्रिब्यून की एक ख़बर को आधार बना कर लिखा है, "रोशनलाल और उनकी पत्नी शिक्षित और (देश दुनिया) घूमी हुई (ट्रैवल्ड) श्रीमती हरदेवी, दोनों ही स्त्री शिक्षा और मुक्ति के प्रसिद्ध कार्यकर्ता थे।"
41 देखें, 'भारत भगिनी', जनवरी 1902 का अंक।
42. लूसी कैरोल, 'द हिंदुस्तानी कायस्थ', पृ. 264
43. 'द इंडियन मैग्जीन एंड रिव्यू', इश्यू—229–240, 1890, पृ. 262; यहाँ पिछले महीने कलकत्ता में हरदेवी के भाई सेवाराम की आकस्मिक मृत्यु हो जाने की ख़बर छपी है, जो अभी-अभी बैरिस्टर बन कर इंग्लैण्ड से लौटे थे।
44. 'पंजाब पैट्रियट' के हवाले से 'द इंडियन मैग्जीन एंड रिव्यू' में हरदेवी के पुनर्विवाह की ख़बर 1892 में छप रही थी; 'द इंडियन मैग्जीन एंड रिव्यू', नं. 264, दिसम्बर, 1892, पृ. 660
45. लूसी कैरोल, 'द सीवॉयेज कंट्रोवर्सी एंड द कायस्थ ऑफ नार्थ इंडिया, 1901–1909', 'मॉडर्न एशियन स्टडीज़', वॉल्यूम 13, नं. 2, 1979, 265–299; बिशेन नारायण धर, 'कास्ट सिस्टम इन इंडिया' (लंदन की कार्लाईल सोसाइटी में पढ़ा गया एक पर्चा), लंदन, 1889, पृ. 11

संदर्भ संख्या १७ और फिर संदर्भ संख्या ४८ से ५३ तक देखिए।

चित्र १०

सोसाइटी ऑफ अमेरिका फ़ॉर हिदेन लैंड्स', न्यूयार्क, अक्टूबर, 1902; 'द इंग्लिशवूमेंस रिव्यू ऑफ सोशल एंड इंडस्ट्रियल क्वेशचंस', वॉल्यूम 33, 1902, पृ. 272

16. श्रीमती हरदेवी लाहौर में लड़कियों के 'विक्टोरिया स्कूल' की प्रबंधन-समिति में थीं। इसी तरह 1889 में सूरत के 'रायचंद दीपचंद गर्ल्स स्कूल' के पुरस्कार वितरण समारोह में श्रीमती हरदेवी का उल्लेख मिलता है; 'द इंडियन मैग्जीन', अंक 229-240, 1890; 'द टाइम्स ऑफ इंडिया', 27 मार्च, 1889-

17. होम डिपार्टमेंट, 'गवर्नमेंट ऑफ इंडिया प्रोसीडिंग्स', सितम्बर 1908, नं. 49-58; श्रीमती हरदेवी, 'भारत भगिनी', 1902; ए.के. शुक्ला, 'वीमेन चीफ़ मिनिस्टर्स इन कंटेम्प्रेरी इंडिया', ए.पी.एच. पब्लिशिंग कारपोरेशन, दिल्ली, 2007-56

यूनिवर्सिटी प्रेस,

28. कन्हैयालाल, रायब

प्रेस, लाहौर, 188

पढ़ने में जवाहरला

के शोधार्थी जिय

29. 'मिनट्स ऑफ

इंजीनियर्स विं

वॉल्यूम XCIV

313-317

30. वही,

31 वही,

42

इस सूचना का स्रोत नेशनल आर्काइव, दिल्ली में किया गया चारु का शोध है। वहाँ के रिकॉर्ड्स में दर्ज है कि दिल्ली विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग की शोधार्थी द्वारा २०१६ में गुप्तचर विभाग की कितनी फ़ाइलें यह संदर्भ खोजने के लिए देखीं गई थीं। इसका पहला ज़िक्र मनमोहन कौर ने १९६८ में किया था। जानकी देवी बजाज ने भी अपनी किताब में इसका ज़िक्र किया था। इसके बावजूद अपने लेख में इतनी सी बात कहने के लिए उसे नेशनल आर्काइव में जाकर उसे वेरीफाई करना जरूरी लगा था।

पब्लि... नार्मन जेरल्ड बारियर, पाल वल्श, इश्यू 14 ऑफ 1905, ओकेजनल पेपर : साउथ एशिया सीरिज़, मिशिगन स्टेट यूनिवर्सिटी एशियन स्टडीज़ सेंटर, प्रकाशक—रिसर्च कमिटी ऑफ द पंजाब, 1970

37. 'हिंदू विडोज़ बाई वन ऑफ देम, रिटेन बाई अ यंग विडो, एंड ट्रांसलेटेड बाई एन इंग्लिश लेडी', जर्नल ऑफ द नेशनल इंडियन एसोसिएशन इन एड ऑफ सोशल प्रोग्रेस इन इंडिया, नं. 131, नवम्बर 1881, लंदन, सी. केगन पॉल एंड कम्पनी, पृ. 624–630
38. 'स्त्री विलाप', पृ. 10–12
39. 'सीमंतनी उपदेश', पृ. 99
40. ''श्रीमती हरदेवी ने ख़ुद को अपनी देशवासी बहनों की उन्नति के काम में लगा दिया और फिर ज़नाना में भेजने के लिए एक उपयोगी पत्रिका निकाली''; 'द इंडियन मैग्ज़ीन एंड रिव्यू' 1892, पृ. 660; लूसी कैरोल ने 11 अगस्त 1894 के लाहौर ट्रिब्यून की एक ख़बर को आधार बना कर लिखा है, ''रोशनलाल और उनकी पत्नी शिक्षित और (देश दुनिया) घूमी हुई (ट्रैवल्ड) श्रीमती हरदेवी, दोनों ही स्त्री शिक्षा और मुक्ति के प्रसिद्ध कार्यकर्ता थे।''
41. देखें, 'भारत भगिनी', जनवरी 1902 का अंक।
42. लूसी कैरोल, 'द हिंदुस्तानी कायस्थ', पृ. 264
43. 'द इंडियन मैग्ज़ीन एंड रिव्यू', इश्यू—229–240, 1890, पृ. 262; यहाँ पिछले महीने कलकत्ता में हरदेवी के भाई सेवाराम की आकस्मिक मृत्यु हो जाने की ख़बर छपी है, जो अभी-अभी बैरिस्टर बन कर इंग्लैण्ड से लौटे थे।
44. 'पंजाब पैट्रियट' के हवाले से 'द इंडियन मैग्ज़ीन एंड रिव्यू' में हरदेवी के पुनर्विवाह की ख़बर 1892 में छप रही थी; 'द इंडियन मैग्ज़ीन एंड रिव्यू', नं. 264, दिसम्बर, 1892, पृ. 660
45. लूसी कैरोल, 'द सीवॉयेज कंट्रोवर्सी एंड द कायस्थ ऑफ नार्थ इंडिया, 1901–1909', 'मॉडर्न एशियन स्टडीज़', वॉल्यूम 13, नं. 2, 1979, 265–299; बिशेन नारायण धर, 'कास्ट सिस्टम इन इंडिया' (लंदन की कार्लाईल सोसाइटी में पढ़ा गया एक पर्चा), लंदन, 1889, पृ. 11

... बालक को लाला रोशनलाल की पत्नी श्रीमती हरदेवी को दे दिया। वह अब तक उन्हीं के पास लाहौर में है''; सरस्वती, अप्रैल 1908 में प्रकाशित, महावीर प्रसाद द्विवेदी रचनावली, पृ. 269

48. 'भारत भगिनी', जनवरी, 1902
49. होम पॉलिटिकल, उपरोक्त।
50. जानकी देवी बजाज, समर्पण और साधना : श्रीमती जानकी देवी बजाज के 80 वीं वर्षगाँठ के अवसर पर प्रणीत ग्रंथ, सम्पादकमण्डल—बनारसी दास चतुर्वेदी तथा अन्य, सम्पादक—भवानीप्रसाद मिश्र तथा यशपाल जैन, सस्ता साहित्य मण्डल, 1973
51. मनमोहन कौर, 'रोल ऑफ वीमेन इन द फ़्रीडम मूवमेंट', स्टर्लिंग, दिल्ली, 1968, पृ. 98
52. सत्यकेतु विद्यालंकार, हरिदत्त वेदालंकार, 'आर्य समाज का इतिहास', खंड-4, आर्य स्वाध्याय केंद्र, 1982, पृ. 384
53. 'वीमेन चीफ़ मिनिस्टर्स इन इंडिया', पृ. 56
54. श्रीमती हरदेवी, 'लंदन यात्रा', ओरिएंटल प्रेस, लाहौर, अगस्त 1888, भूमिका।
55. वही,
56. लंदन यात्रा ,104-107
57. स्थानीय बाज़ार
58. लंदन यात्रा,115-117
59. वही, भूमिका।
60. जे. के. रॉलिंग्स, 'हैरी पॉटर एंड द गॉब्लेट ऑफ फ़ायर', आर्थर ए. लेविन बुक्स, यू. एस. ए., 2000, पृ. 98–99
61. व्यंग्य चित्रावली, इलाहाबाद, 1930, साभार—चारु गुप्ता, ''स्त्रीत्व से हिंदुत्व तक''
62. श्रद्धाराम फ़िल्लौरी, (1880), भाग्यवती, ऋषभचरण जैन तथा संतति, दिल्ली, 1988, पृ. 82
63. बंग महिला, (1907), दुलाईवाली, बंग महिला ग्रंथावली, सम्पादक, सुधाकर पांडेय, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, सं. 2045 वि., पृ. 1–7
64. प्रेमचंद, (1925), दो सखियाँ, 'प्रेमचंद की सम्पूर्ण कहानियाँ', खंड-1, सुमित्र प्रकाशन, इलाहाबाद, 2010, पृ. 786–828

43

आलोचना अप्रैल-जून 2016

चित्र ११

अपनी भूमिका के पृष्ठ १४ पर गरिमा जी लिखती हैं "सन 1886 की 'द इंडियन मैगजीन' ने दादाभाई नौरोजी, रतन जी. बनर्जी, लक्ष्मीनारायण तथा अपने भाई सेवाराम के परिवार के साथ श्रीमती हरदेवी के लन्दन जाने की ख़बर प्रकाशित की थी।"[9] इसका संदर्भ यह देती हैं-

'हिन्दू लेडीज़' श्रीमती हरदेवी और श्रीमती सेवाराम के लन्दन पहुँचने तथा स्वागत की सूचना 'द इंडियन मैगजीन' के अंक 181-182, नेशनल इंडियन असोसिएशन, लन्दन,1886 में भी प्रकाशित हुई थी।'

---

[9] **पृष्ठ १४**

आप चित्र संख्या १२ और १३ देखिए। इनको पढ़ने पर आप पाएंगे कि 'द इंडियन मैगजीन' के अंक 181-182, नेशनल इंडियन असोसिएशन, लन्दन,1886 का जो संदर्भ गरिमा जी ने दिया है, वह उस खबर का चारु द्वारा किया गया पाठ है । यह सार रूप में उसकी भाषा और शब्दों में है। उसी को यहाँ अक्षरशः उठा लिया गया है।

लॉ एंड वीमेंस राइट्स', आक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1998

8. रामविलास शर्मा, 'भारतेंदु युग और हिंदी भाषा की विकास परम्परा', राजकमल प्रकाशन, 1975, पृ. 28
9. अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी, 'समाचारपत्रों का इतिहास', ज्ञानमंडल, वाराणसी, 1986
10. हालाँकि, हरदेवी का लंदन जाना, अंग्रेज़ी पत्र-पत्रिकाओं के लिए एक महत्वपूर्ण ख़बर थी। 1886 के 'द इंडियन मैग्जीन' ने दादाभाई नौरोज़ी, रतनजी बनर्जी, लक्ष्मीनारायण तथा अपने भाई सेवाराम के परिवार के साथ, श्रीमती हरदेवी के लंदन जाने की ख़बर प्रकाशित की थी (पृ. 280); इसी पत्रिका में 'हिंदू लेडीज़' श्रीमती सेवाराम तथा श्रीमती हरदेवी के लंदन पहुँचने पर उनके स्वागत की भी ख़बर छपी थी। (पृ. 276); 'द इंडियन मैग्जीन', अंक 181-182, नेशनल इंडियन एसोसिएशन, लंदन, 1886
11. अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी, 'समाचारपत्रों का इतिहास', ज्ञानमंडल, वाराणसी, 1986, रामविलास शर्मा, 'भारतेंदु युग और

41

चित्र संख्या - १२

क्या ही अच्छा होता अगर गरिमा जी जब चारु के लेख से यह सारी सूचनाएं और व्याख्या उठा रही थी तो फुटनोट में बस उसका संदर्भ दे देतीं। फिर किसी को कोई शिकायत न रहती। लेकिन गरिमा जी की मंशा शायद कुछ और थी। इसी प्रसंग में फिर देखिए किस हड़बड़ी में उन्होंने नक़ल की होगी की एक और

महत्त्वपूर्ण गलती इस किताब में हो गई है। उपरोक्त वाक्य में गरिमा जी लिखती हैं कि इस पत्र ने "श्रीमती हरदेवी के लन्दन जाने की ख़बर प्रकाशित की थी" लेकिन यह खबर तो उनके लंदन पहुँचने पर हुए स्वागत की है। वह भी चारु के शब्दों में, उसकी भाषा में संदर्भ सूची के लिए लिखा गया उस ख़बर का सारांश है।

छवियाँ पेश कर रही थीं। सभ्यता के हज़ारों वर्षों के इतिहास में ऐसी अनगिनत औरतों को, जिनका इतिहास में होना, स्त्री जाति को गौरव के बोध से भर देता, जिनके रहते पितृसत्ता की कोरी गप्प, जो बतौर 'इतिहास' हमारे सामने मौजूद है, किसी काम की नहीं रहती, उन्हें इतिहास से बाहर रखा गया। सीमंतनी उपदेश की 'अज्ञात' हिंदू लेखिका, जिनका नाम श्रीमती हरदेवी था, का शुमार ऐसी ही औरतों में है।

वह दौर जब हिंदी के सार्वजनिक जगत में 'बालाबोधिनी' जैसी पत्रिकाएँ निकाल कर लड़कियों को बेशर्त 'पतिसेवा' और 'पतिभक्ति' का पाठ पढ़ाया जा रहा था, उस वक़्त 'सीमंतनी उपदेश' जैसी पुस्तक लिख कर 'पतिव्रत धर्म' का मखौल उड़ाने वाली इस विधवा युवती को हिंदी का पितृसत्तात्मक लोकवृत्त क्योंकर अपना लेता? सो वही हुआ, जो पितृसत्तात्मक इतिहास ऐसी स्त्रियों के साथ करता है। हरदेवी कहीं किसी पुस्तकालय की जर्जर धूल खाई रचना में 'अज्ञात' हिंदू औरत के रूप में दबी रहीं, तो कहीं हिंदी साहित्य के किसी इतिहास में 'किसी वक़ील की पत्नी' के रूप में।[8] कहीं पर उनके द्वारा निकाली जा रही पत्रिका की नाप-जोख तो दुरुस्त थी, लेकिन हरदेवी का नाम गुमनाम हो चुका था।[9] यह बात और है कि एक समय था, जब हरदेवी हिंदी, उर्दू तथा अंग्रेज़ी की मिली-जुली सार्वजनिक दुनिया में अपने नाम से पहचानी जाती थीं।

1886 के मार्च महीने में जब पश्चिमोत्तर प्रांत की एक महिला, इंग्लैण्ड के लिए रवाना होने वाले जहाज़ पर चढ़ी, उस वक़्त हिंदी के लोकवृत्त ने इस ख़बर को ध्यान देने लायक भी नहीं समझा था।[10] हालाँकि दो वर्ष बाद ही इन्हें उपेक्षित कर पाना कठिन हो गया[11], जब लंदन से लौटने के बाद श्रीमती हरदेवी ने दूसरी औरतों को भी परदे से बाहर खींच लाने की जद्दोजहद शुरू कर दी। अब हरदेवी के निजी क्रियाकलाप भी अख़बारों की सुर्ख़ियाँ बनने लगे थे।[12] 12 मार्च 1889 को जब वे आत्माराम पाण्डुरंग, बैरिस्टर रोशनलाल, मदनलाल लल्लू भाई मुंसिफ़ आदि के साथ अपने भाई सेवाराम और उनकी पत्नी को लंदन के लिए विदा करने बंदरगाह पर पहुँचीं तो 'द टाइम्स आफ़ इंडिया' जैसे अख़बारों ने इस ख़बर को प्रमुखता से छापा। हरदेवी की तीन वर्ष पहले की गई 'लंदन यात्रा' को याद करते हुए 'द टाइम्स आफ़ इंडिया' ने लिखा,

"श्रीमती सेवाराम और श्रीमती हरदेवी संभवतः पहली कायस्थ महिलाएँ हैं जिन्होंने अपना परदा उतार फेंका और कालापानी को पार किया, और इसके लिए वे अतिरिक्त श्रेय की हक़दार हैं क्योंकि उनके क्षेत्र की महिलाएँ बहुत ही पिछड़ी दशा में हैं और शायद ही कभी परदे से बाहर निकलती हैं।"[13]

आख़िर कौन थी यह महिला?

आधुनिक लाहौर की अनेक ख़ूबसूरत इमारतों के निर्माता, लेखक तथा इतिहासकार रायबहादुर कन्हैयालाल की पुत्री हरदेवी उच्च शिक्षा के लिए इंग्लैण्ड जाने वाली संभवतः प्रथम हिंदीभाषी महिला थीं। स्त्री शिक्षा के प्रचार के लिए समर्पित श्रीमती हरदेवी की सार्वजनिक उपस्थिति पहली बार 'लंदन-यात्रा' के साथ ही दिखाई देती है, जहाँ वे बच्चों (सम्भवतः बालिकाओं) की शिक्षा से सम्बंधित किंडरगार्टेन पद्धतियों का अध्ययन करने गई थीं। जहाँ से लौटकर उन्होंने अंग्रेज़ी तथा देशी भाषाओं में अनेक पैमफ़्लेट—पुस्तिकाएँ प्रकाशित कीं तथा 'स्त्री शिक्षा को समर्पित' मासिक पत्र 'भारत भगिनी' को इलाहाबाद से निकालना शुरू किया जिसे बाद में ये लाहौर ले आई थीं।

हरदेवी अपने समय के हिंदीभाषी संसार में 'अज्ञात' या अपरिचित नहीं थीं। 1888 में लंदन से लौटने के बाद श्रीमती हरदेवी लाहौर तथा देश के दूसरे हिस्सों में होने वाली सार्वजनिक गतिविधियों में लगातार सक्रिय देखी जा सकती हैं। कभी कांग्रेस या सोशल कॉन्फ़्रेंस के अधिवेशनों में[14], कभी किसी महिला सभा में भाषण देते हुए[15], कभी किसी कन्या विद्यालय के समारोह में[16], तो कभी राजनैतिक आंदोलनों की अगली कतार में।[17] सब कहीं उनके धुँधले पड़ गए निशान मौजूद हैं। आश्चर्य है, एक-एक साहित्यकार पर सैकड़ों पुस्तकें लिख डालने वाला हिंदी का सार्वजनिक जगत, इस गम्भीर और प्रभावशाली लेखिका के विषय में आपराधिक ढंग से मौन क्यों है?

हिंदी-लोकवृत्त के शुरुआती दिन और श्रीमती हरदेवी

कमोबेश हिंदी के साहित्येतिहासकारों का नायक-पूजा के प्रति अगाध प्रेम, हमेशा से सार्वजनिक क्षेत्र की एक समूची तस्वीर खींच पाने में बाधा बना रहा है। वस्तुतः हिंदी साहित्य का इतिहास, छँटनी का इतिहास बन कर रह गया है जहाँ धर्म, वर्ण, लिंग, क्षेत्र, लहजा, आदि कोई भी

आलोचना अप्रैल-जून 2016 17

चित्र संख्या - १३

अगला प्रसंग देखिए। गरिमा जी लिखती हैं "इस बात के प्रमाण मिलते हैं कि उनके लन्दन जाने और पढ़ने की व्यवस्था 'नेशनल इंडियन असोसिएशन' ने की थी. श्रीमती हरदेवी से सम्बद्ध सूचनाएं 'नेशनल इंडियन असोसिएशन' की पत्रिका 'इंडियन इंटेलिजेंस' स्तम्भ के तहत छापी जाती थीं."[10]

---

[10] **पृष्ठ १४**

यहाँ पर भी नक़ल (प्लेजियरिज़्म) दो स्तरों पर साफ़-साफ़ मौजूद है-

१. शोध और सूचनाओं के रूप में

२. निष्कर्षों के रूप में

हरदेवी का इस संस्था से संबंध, उनका 'इंडियन इंटेलिजेंस' कॉलम में छपना आदि तमाम सूचनाएँ चारु ने जिन शब्दों में अपने लेख में दर्ज किए उन्हें लगभग वैसे ही इस किताब के लिए उठा लिया गया। यह कयास भी चारु ने ही लगाया था कि ज़रूर उन्हें इस संस्था ने मदद की होगी। कयास इसलिए कि किसी स्कॉलरशिप के मिलने की कोई ठोस जानकारी उसके पास न थी। वैसे भी हरदेवी के पिता लाहौर के अमीर और प्रसिद्ध व्यक्तियों में शामिल थे। यहाँ चारु की सूचनाओं का इस्तेमाल करते हुए गरिमा जी द्वारा बिना संदर्भ दिए 'कयास' को 'प्रमाण' जैसे वजनी शब्द से बदल देना और इसके लिए कोई सन्दर्भ न दे पाना इस किताब की गंभीरता को और भी कम करता है। अगला चित्र देखिए इसमें आप देख सकते हैं कि कितने विस्तार से चारु ने इस विषय पर अपनी बात रखी थी और यह विचार प्रस्तावित किया था ।

होंगी, जो विधवा हों और जिनके विधवा जीवन तथा स्त्री-सम्बंधी मुद्दों पर लेख उसी एक पत्रिका में छपते रहे हों ? यह भी संयोग नहीं, जब लंदन से लौटकर हरदेवी अपने नाम से लेख तथा किताबें लिखने लगीं, उसके बाद इस 'युवा विधवा' के लेख नहीं मिलते।

5. जिस 'National Indian Association' की पत्रिका में उक्त विधवा युवती का यह लेख छपा था उस संस्था के सम्पर्क में श्रीमती हरदेवी बाद में भी बनी रहती हैं जिसे उनकी 'लंदन यात्रा' के दौरान देखा जा सकता है। 'सीमंतनी उपदेश' पुस्तक के छपने से एक वर्ष पहले इसका एक लेख 'नेशनल इंडियन एसोसिएशन' की पत्रिका में छपा था, जिसका ज़िक्र हम कर चुके हैं। 'नेशनल इंडियन एसोसिएशन' के लंदन ब्रांच की 1871में स्थापना करने वाली ई.ए. मैनिंग इसके सदस्य दादा भाई नौरोज़ी तथा बी.एम. मालाबारी आदि से हरदेवी के घनिष्ठ सम्बंध थे। 'लंदन यात्रा' की तैयारी के लिए एक माह पूर्व ही हरदेवी के भाई सेवाराम बम्बई पहुँच चुके थे और दादा भाई नौरोज़ी के घर पर ठहरे हुए थे। हरदेवी भी दादा भाई नौरोज़ी के घर ही ठहरीं थीं, जिन्हें 'लंदन यात्रा' में वे 'पारसी मित्र' कह कर सम्बोधित करती हैं। नेशनल इंडियन एसोसिएशन की लंदन शाखा की संस्थापक ई.ए. मैनिंग की हरदेवी से मित्रता का उल्लेख इसी पत्रिका में मिलता है। ई.ए. मैनिंग लाहौर जाने पर हरदेवी और उनके भाई सेवाराम के घर जाया करती थीं तथा हरदेवी के भाई भाभी के साथ मिस मैनिंग के लंदन जाने की ख़बर भी 'टाइम्स आफ इंडिया' में छपी थी। नेशनल इंडियन एसोसिएशन का प्राथमिक उद्देश्य भारत में स्त्री शिक्षा का प्रसार करना था। ऐसे में कोई संदेह नहीं रह जाता कि हरदेवी के लंदन जाने तथा पढ़ने की व्यवस्था 'नेशनल इंडियन एसोसिएशन' की मदद से हुई थी। लंदन में भी हरदेवी ई.ए. मैनिंग के सम्पर्क में बनी हुई थीं तथा वहाँ से लौटकर इस संस्था की पत्रिका में अपने लेख छपने के लिए दिया करती थीं। हरदेवी से जुड़ी ख़बरें 'नेशनल इंडियन एसोसिएशन' की पत्रिका में प्रायः 'इंडियन इंटैलिजेंस' शीर्षक के तहत छापी जाती थीं। लंदन जाते वक़्त हरदेवी अंग्रेज़ी नहीं जानती थीं, 'सीमंतनी उपदेश' की लेखिका भी नही जानती थी। ई.ए. मैनिंग से उनके घनिष्ठ सम्बंध इस ओर इशारा करते हैं कि 1881 में अपनी पत्रिका के लिए ख़ुद मिस मैनिंग ने उनके लेख का अनुवाद किया होगा क्योंकि उस लेख की अनुवादिका एक 'इंग्लिश लेडी' हैं। लंदन से लौटने के बाद हरदेवी को अनुवादक की ज़रूरत नहीं थी। इस संस्था की पत्रिका तथा 'पंजाब पैट्रियट' जैसी दूसरी अंग्रेज़ी पत्रिकाओं में वे ख़ुद ही लिखने लगी थीं।

6. नेशनल इंडियन एसोसिएशन की स्थापना मैरी कारपेंटर ने केशव चंद्र सेन की मदद से की थी, जिसकी पत्रिका में 'सीमंतनी उपदेश' के अंश छपे थे। ऐसे में इस युवा विधवा के ब्रह्मसमाज से जुड़े होने में संदेह नहीं है। नवीनचंद्र राय आदि का किताब की शुरुआत में अत्यधिक आदर के साथ उल्लेख तथा हिंदू स्त्रियों द्वारा साँप, बिच्छू, चील, कौवा की पूजा करने के रिवाज पर अफ़सोस ज़ाहिर करते हुए लिखना, ''क्या ये वही हैं जो एक ही ब्रह्म की उपासना करती थीं?'' 'सीमंतनी उपदेश' में आए इस तरह के विवरणों से भी इसकी लेखिका के ब्रह्मसमाजी होने में संदेह नहीं रह जाता। श्रीमती हरदेवी ब्रह्मसमाजी थीं। इस तरह भी वे ही 'सीमंतनी उपदेश' की लेखिका मालूम होती हैं।

7. 'तारीख़-ए-लाहौर' की शुरुआत में राय बहादुर कन्हैयालाल 'खुदा' का शुक्र अदा करते है। सीमंतनी उपदेश की लेखिका भी ईश्वर के लिए 'खुदा' का सम्बोधन करती हैं। *स्त्री विलाप* की विधवा लेखिका अपने भजन में खुदा को सम्बोधित करती है। क्या उन्नीसवीं सदी में बहुत सी ऐसी हिंदू लेखिकाएँ रही होंगी जो अपने ईश्वर को खुदा कहकर पुकारें ? हरदेवी के पिता राय बहादुर कन्हैयालाल जो 'हिंदी' तख़ल्लुस से हिंदोस्तानी और फ़ारसी में शायरी किया करते थे तथा जिन्होंने कई इतिहास की किताबें हिंदोस्तानी भाषा में लिखी थीं बहुत सम्भव है इसका असर उनकी बेटी पर भी पड़ा होगा। 'सीमंतनी उपदेश' मूल रूप से नागरी भाषा में लिखी गई किताब है, जिसमें संस्कृतनिष्ठ हिंदी की जगह उर्दू शब्दों का इस्तेमाल किया गया है। कुछ विद्वान इसे मूल रूप से उर्दू में लिखा हुआ समझते हैं लेकिन ऐसा नहीं है। असल में लिपिकार 'ऋषिराज' का नाम देखकर ऐसा भ्रम होता है। लेकिन लिपिकार, उस दौर में सुलेखक हुआ करते थे जिनका काम लिप्यांतरण करना नहीं बल्कि किताबों को हाथ से तैयार करना होता था। यह शैली फ़ारसी किताबों के ज़माने से चली आ रही थी, जिसमें एक फ़्रेम के भीतर हाथ से लिखकर किताबें तैयार की जाती थीं तथा उसी की प्रतियाँ बनायी जाती थीं। सीमंतनी उपदेश के दो पृष्ठों के जो नमूने डा. धर्मवीर ने उपलब्ध कराए हैं, वे हाथ से लिखे हुए हैं।

चित्र संख्या - १४

अब तक आप देख चुके होंगे कि गरिमा जी की किताब ‘हरदेवी की यात्रा’ की भूमिका के पहले ही पन्नों और समालोचन ब्लॉग पर छपे उनके लेख में नक़ल (प्लेजियरिज़्म) के कितने प्रमाण मौजूद हैं। अगर संयोजक वाक्यों और हरदेवी के उद्धरणों को निकाल दीजिए तो यह लगभग सौ प्रतिशत अकादमिक चोरी का मामला है। कोई भी व्यक्ति अगर चाहे तो चारु सिंह के आलोचना पत्रिका में प्रकाशित दोनों लेखों के साथ गरिमा जी के हरदेवी से संबंधित लिखे को पढ़कर इस जालसाजी को देख सकता है।

अपनी भूमिका में गरिमा जी आगे लिखती हैं “8 अक्टूबर,1888 के ‘द टाइम्स आफ़ इंडिया’ में यह खबर छपी थी कि श्रीमती हरदेवी ने लाहौर में 150 पर्दानशीन स्त्रियों की सभा आयोजित की थी जिसमें लेडी डफ़रिन को धन्यवाद ज्ञापित करने के साथ-साथ कई अन्य प्रस्ताव भी पास किये गए.”[11] यहाँ गरिमा जी ने कोई संदर्भ नहीं दिया । नीचे के चित्र में इस प्रसंग पर चारु के लेख में संदर्भ देखिए। यहाँ चारु की भाषा में लिखे शोध-संदर्भ का सीधे इस्तेमाल गरिमा जी ने कर लिया है।

हिंदुस्तानी कायस्थ', पृ. 264

12. लंदन से लौटते ही हरदेवी ने स्त्रियों को संगठित करना शुरू कर दिया था। 'द टाइम्स ऑफ इंडिया' लिखता है कि हरदेवी ने लाहौर में अपने घर पर 150 पर्दानशीन महिलाओं की एक सभा आयोजित की थी जिसमें लेडी डफ़रिन को धन्यवाद ज्ञापित करने के साथ ही अन्य कई प्रस्ताव पास किए गए थे। 'द टाइम्स ऑफ इंडिया', 8 अक्टूबर, 1888
13. 'द टाइम्स ऑफ इंडिया', 12 मार्च, 1889
14. सीताराम सिंह, 'नेशनलिज़्म एंड सोशल रिफ़ोर्म इन इंडिया :

20.

21.

.
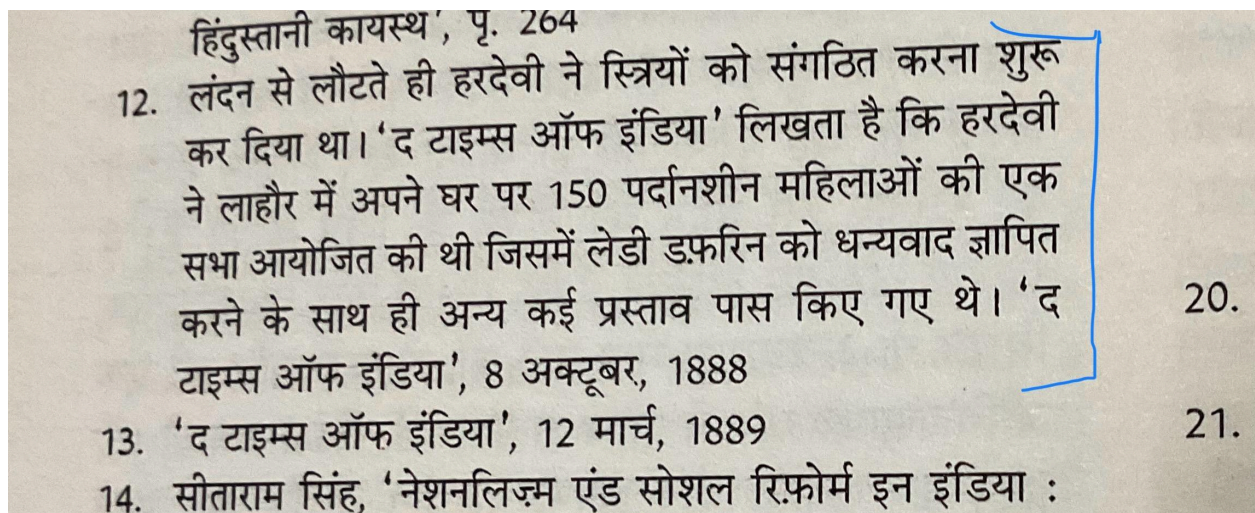
अब कुछ चित्र चारु की हरदेवी पर बनायी गई आर्काइवल फाइल से आपको दिखलाता हूँ। आपको इससे एक शोधार्थी की मेहनत का अंदाज़ा लगेगा जो उस समय बस एक विद्यार्थी थी। यहाँ आपको पूरी ख़बर मिलेगी जिसका सार उसने दिया था और गरिमा जी ने बिना संदर्भ दिए उसे दोहरा दिया। इससे आप समझ सकेंगे कि जब मैं कहता हूँ कि अमुक-अमुक ख़बर/शोध सीधे चारु के लेख से गरिमा जी ने उठा

---

[11] **पृष्ठ १५**

लिया है तो आप समझ पाएंगे। यह संयोग तो नहीं होगा कि चार पन्नों की ख़बर का जो सारांश वह करे हर बार वही गरिमा जी भी करें?

23013203

The Times of India [October, 8 , 1888] -

LADY DUFFERIN AND NATIVE LADIES.

We (Civil and Military Gazette) have great pleasure in publishing the following account of the proceedings of a meeting of the purdanashin ladies of Lahore held on Tuesday, to adopt an Address of Thanksgiving to Lady Dufferin. This being the first time in the Punjab when the Indian ladies have met to honour one to whom honour is due, the meeting deserves notice:—

" A public meeting of the purdanashin ladies of Lahore was held on Tuesday, the 2nd instant, at 2-30 p.m., at the home of the late Rai Bahadur Kanhya Lal, in the Shahalmi Gate, to vote an address of Thanksgiving to her Excellency the Countess of Dufferin for the noble work done by her during her stay in India for Indian Women. Although it was the first time that the purdanashin ladies ever met in Lahore for transacting a public business, everything went off well. Mrs.

Seva Ram (the duaghter-in-law of the late Rai Sahib) who had been back from her trip to England in April last , was unanimously voted to to chair , and her sister-in-law , was appointed to act as secretary of the meeting. The business of the day commenced by Mrs. Seva Ram stating , in a short little speech , the object of the meeting, after which she called upon several ladies to move and second the following resolutions Before these resolutions were actually put to the meetings Srimati Premdevi, the daughter of Lala Beni Prasad , Sub-Engineer, Lahore, and the wife of Dr. Brij Lal Gosh, Rai Bahadur , and the widow of late Pundit Manphul, C.S.I. , explained at some lenght the benifits that will be ultimately derived by Indian women from the National Association for Medical Aid.

The resolutions were passed with acclamation, and run as follows :—

First Resolution. — Moved by Srimati Hardevi, daughter of the late Rai Bahadur Kanhya Lal, and seconded by Srimati Premdevi, "That the purdanashin women

of Lahore present at this meeting unanimously resolved that an Address of Thanksgiving be presented to her Excellency the Countess of Dufferin on her arrival at Lahore in the month of November, 1888, setting forth the deep and sincere gratitude to women of this province owe her Excellency for her noble and benevolent exertions to adequately provide medical aid for them."

Second Resolution. — Moved by Mrs. Agnihotri, seconded by Mrs. Kunja Behari Thapar, "That a sub-committee consisting of the following Indian ladies be appointed to arrange about the address to her Excellency, and to transact any other necessary bussiness in connection therewith :—

(1) Mrs. Sewa Ram (president);
(2) Srimati Prem Devi ;
(3) Mrs. Agnihotri ;
(4) Mrs. Brij Lal Ghose ;
(5) Mrs. Kunj Behari Thapar ;
(6) Mrs. Dewan Manphul ;
(7) Mrs. Bhagat Ram ;

(8) Mrs. Madhusooden Sarkar ;
(9) Mrs. Rulla Ram ;
(10) Mrs. Girdhar Rai ;
(11) Mrs. Ganda Mal ;
(12) Mrs. Beni Pershad ;
(13) Mrs Girdhari Lal ;
(14) Srimati Hardevi, secretary."

Third Resolution -

Moved by the wife of Rai Bahadur Dr. Brij Lal Ghose , and seconded by the daughter late Dewan Manphul C.S.I. ; ~~Moved by the wife of~~
"That the addres be presented at the house of the late Rai Bahadur Kanhya Lal, which is just inside the Shahalmi Gate, and where adequate arrangement for purdah can be easily made, on a date and at a time to be decided by her Excellency the countess of Dufferin ."
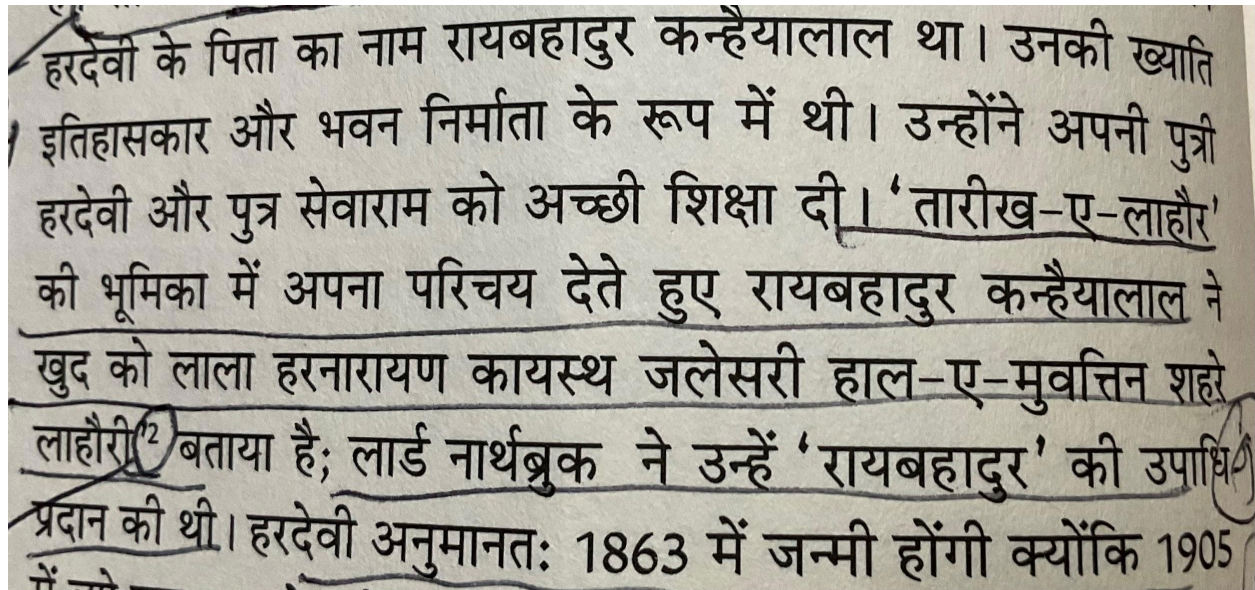
Fourth Resolution —

Moved by Srimati Premdevi, and seconded by Srimati Hardevi , "That the secretary of this meeting be authorised to send a copy of the resolution passed at this meeting together with a copy of the
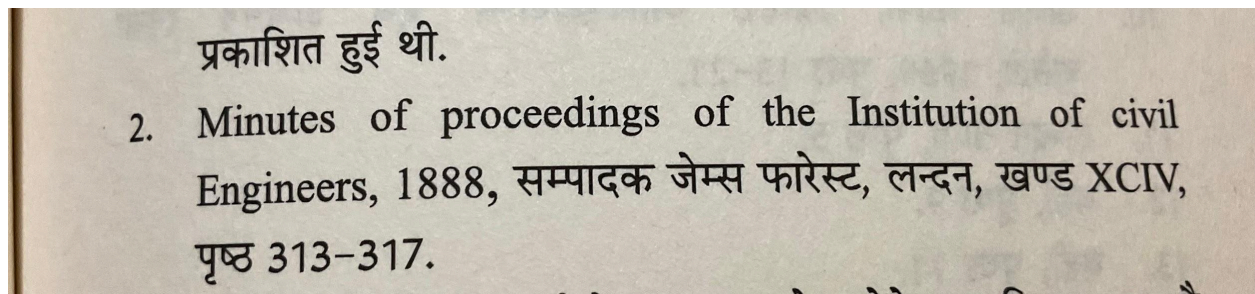
English translation of the address to Lady Dufferin, requesting the kindness of her Excellency's accepting the address as a token of the sincere regard and gratitude the purdanashin ladies cherish towards her Excellency."

अगला प्रसंग देखिए गरिमा जी आगे लिखती हैं "'तारीख-ए-लाहौर' की भूमिका में अपना परिचय देते हुए रायबहादुर कन्हैयालाल खुद को लाला हरनारायण कायस्थ जलेसरी हाल-ए-मुवत्तिन शहरे लाहौरी' बताया है."[12]

जरा इन चित्रों को ध्यान से देखिए। पहले गरिमा जी की किताब से इस वाक्य को और उनकी संदर्भ सूची में इसका संदर्भ देखिए।

हरदेवी के पिता का नाम रायबहादुर कन्हैयालाल था। उनकी ख्याति इतिहासकार और भवन निर्माता के रूप में थी। उन्होंने अपनी पुत्री हरदेवी और पुत्र सेवाराम को अच्छी शिक्षा दी। 'तारीख-ए-लाहौर' की भूमिका में अपना परिचय देते हुए रायबहादुर कन्हैयालाल ने खुद को लाला हरनारायण कायस्थ जलेसरी हाल-ए-मुवत्तिन शहरे लाहौरी[2] बताया है; लार्ड नार्थब्रुक ने उन्हें 'रायबहादुर' की उपाधि प्रदान की थी। हरदेवी अनुमानतः 1863 में जन्मी होंगी क्योंकि 1905

प्रकाशित हुई थी.

2. Minutes of proceedings of the Institution of civil Engineers, 1888, सम्पादक जेम्स फारेस्ट, लन्दन, खण्ड XCIV, पृष्ठ 313-317.

आप देख सकते हैं कि गरिमा जी के द्वारा सूचना 'तारीख-ए-लाहौर' से दी जा रही है और संदर्भ यह दिया गया है-

"Minutes of proceedings of the Institution of civil Engineers,1888, संपादक जेम्स फारेस्ट ,लन्दन,खंड XCIV,पृष्ठ 313-317
."

---

[12] **पृष्ठ १६**

ऐसा क्यों हुआ आप यह चित्र देखकर समझ जाएँगे।

वाले मौजूद थे। लगभग पाँच दशकों तक भारत के सार्वजनिक जगत में श्रीमती हरदेवी के व्यक्तित्व ने अपनी उपस्थिति बनाए रखी। लेकिन नेशनल सोशल कान्फ्रेंस की एक सदस्य, हिंदी की पहली महिला सम्पादक तथा उन्नीसवीं सदी की उम्दा साहित्यकार श्रीमती हरदेवी के विषय में हिंदी के पाठक शायद ही जानते हों।

अहले कमाल रायबहादुर कन्हैयालाल 'हिंदी'

'तारीख़-ए-लाहौर' की भूमिका[28] में अपना परिचय देते हुए राय बहादुर कन्हैयालाल ख़ुद को "लाला हरनारायण कायस्थ जलेसरी हाल ए मुवक्तिन शहरे लाहौरी" का पुत्र बताते हैं। 'Minutes of Proceedings of the Institution of Civil Engineers, 1888'[29] में भी कन्हैयालाल को पश्चिमोत्तर प्रांत के आगरा ज़िले में अवस्थित जलेसर का निवासी बताया गया है। यह अब एटा जिले में पड़ता है। प्रारम्भिक शिक्षा 'गवर्नमेंट कालेज, आगरा' से प्राप्त करने के बाद वे रुड़की कालेज (वर्तमान आई.आई.टी. रुड़की) में इंजीनियरिंग की पढ़ाई के लिए चले गए। जहाँ वे इंजीनियरिंग की उपाधि पाने वाले प्रथम भारतीय हुए।[30] 1851 में उनकी नियुक्ति 'पूर्वी यमुना कनाल' में बतौर सब-असिस्टेंट सिविल इंजीनियर हुई। 1852 में लाहौर के 'लोक निर्माण विभाग' में उनकी नियुक्ति हुई। वे यहाँ कुछ ही वर्षों में विभाग के सबसे ऊँचे ओहदे, 'एक्जीक्यूटिव इंजीनियर' पर पहुँच गए, जो उस दौर में किसी भारतीय के लिए एक बड़ी उपलब्धि थी।[31] कन्हैयालाल लगभग तीन दशकों तक लाहौर के 'लोक निर्माण विभाग' में कार्यरत रहे और शहर की कई महत्वपूर्ण इमारतों का निर्माण उनकी देखरेख में हुआ। इनमें 'मेयो स्कूल आफ़ आर्ट्स', 'मांटगोमरी एंड लारेंस हाल' जो अब 'कायद ए आज़म' पुस्तकालय है, 'लाहौर सेंट्रल जेल', 'टेलीग्राफ़ आफ़िस', लाहौर का 'मुख्य न्यायालय' और दूसरी बहुत सी इमारतें शामिल हैं। उन्होंने मुग़ल काल की बहुत सी इमारतों का जीर्णोद्धार भी किया, जिनमें 'दाई अनगा का मक़बरा', 'शरफ़ुन्निसा बेगम का मक़बरा', 'जहाँगीर और आसफ़जहां का मक़बरा' आदि सम्मिलित हैं।[32] उनकी सेवाओं के लिए 1876 में लॉर्ड नॉर्थब्रुक ने उन्हें 'रायबहादुर' की उपाधि प्रदान की।[33] रायबहादुर कन्हैयालाल केवल इंजीनियर ही नहीं थे, अपने समय के एक गम्भीर लेखक भी थे। उनके इतिहास ग्रंथ 'तारीख़-ए-पंजाब', 'तारीख़-ए-लाहौर', 'ज़फ़रनामा ए रणजीत सिंह' आदि आज भी गम्भीर इतिहास पुस्तकों में गिने जाते हैं। पंजाब में ज़िंदगी गुज़ार देने वाले कन्हैयालाल को अपने 'हिंदी' होने का शिद्दत से अहसास था। वे फ़ारसी तथा हिंदोस्तानी[34] में 'हिंदी' तख़ल्लुस से शायरी किया करते थे।[35] उनके 'गुलज़ार-ए-हिंदी', 'निगारीन नामा' आदि की इतनी माँग थी कि वह उन्हें कई बार छपवा चुके थे, जिसका ज़िक्र वे 'तारीख़-ए-लाहौर' की भूमिका में करते हैं। यह उस ज़माने की बात है, जब हिंदी और उर्दू के बीच की लौह दीवार खींची जानी बाक़ी थी। ख़ुद को 'हिंदी' कहने वाला यह उर्दू तथा फ़ारसी का लेखक इतिहासकार, जिसकी खड़ी बोली ने अपनी शैली मज़हब को आगे रखकर नहीं चुनी थी, उनका होना उसी दौर में सम्भव था। यह वो परम्परा थी जिसने हमें प्रेमचंद दिए। रायबहादुर कन्हैयालाल हिंदी क्षेत्र के उस बहुभाषिक समुदाय के प्रतिनिधि थे जिसे 'नागरी हिंदी' के तंग दायरे के भीतर नहीं समझा जा सकता। अंग्रेज़ी में शिक्षित इंजीनियर कन्हैयालाल जिनकी मादरी ज़बान ब्रजभाषा थी, जो पंजाबी के जानकार थे और फ़ारसी तथा हिंदोस्तानी के लेखक; भारत के बहुभाषिक समुदाय की उस अवधारणा की ओर इशारा करते हैं जिसपर फ्रेंचेस्का ऑर्सीनी जैसे विद्वान ज़ोर देते रहे हैं। इन्हीं रायबहादुर कन्हैयालाल की पुत्री थीं श्रीमती हरदेवी, जो इसी बहुभाषिक पृष्ठभूमि में पली-बढ़ी थीं।

आगे हम देखेंगे कि किस तरह हिंदोस्तान में न सिर्फ़ देशज भाषाओं की दुनिया आपस में जुड़ी हुई थीं बल्कि हिंदी का लोकवृत एक हद तक अंग्रेज़ीभाषी भारतीय समुदाय के बीच आकार ले रही अंग्रेज़ी की दुनिया से भी जुड़ा हुआ था। जहाँ विचारों तथा बहसों का अबाध आदान-प्रदान चला करता था। हम देखेंगे कि किस तरह युवा हरदेवी की हिंदी रचना का अंग्रेज़ी अनुवाद एक 'इंग्लिश लेडी' ने किया और किस तरह एक अंग्रेज़ी भाषी बंगाली ने अपने लेख में 'सीमंतनी उपदेश' की पंक्तियाँ कई वर्ष बाद उद्धृत की और कैसे सीमंतनी उपदेश का पहला अध्याय पंडिता रमाबाई द्वारा अपनी चर्चित किताब 'द हाई कास्ट हिंदू वीमेन' में उद्धृत किया गया। इसी तरह हरदेवी के 'वर्नाक्यूलर' भाषा में किए गए लेखन पर किस तरह 'पंजाब पैट्रियट' या दूसरी अंग्रेज़ी की पत्रिकाओं में चर्चा होती रही। यह सब उन्नीसवीं सदी के उस बहुभाषिक समाज

आलोचना के लेख की संदर्भ सूची देखिए

28. कन्हैयालाल, रायबहादुर, 'तारीख़-ए-लाहौर' (उर्दू), विक्टोरिया प्रेस, लाहौर, 1884; उर्दू में लिखी इस किताब को सही-सही पढ़ने में जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय में मध्यकालीन इतिहास के शोधार्थी जियाउल हक़ ने मेरी मदद की।
29. 'मिनट्स ऑफ प्रोसीडिंग्स ऑफ द इंस्टिट्यूशन ऑफ सिविल इंजीनियर्स विंड अदर सेलेक्टेड एंड एब्स्ट्रैक्ट पेपर्स', वॉल्यूम XCIV. , सम्पादक, जेम्स फ़ारेस्ट, लंदन, 1888, 313-317
30. वही,

इस प्रसंग में आपको एक व्यक्तिगत अनुभव बताता हूँ। उन दिनों मैं जेएनयू के ब्रह्मपुत्रा छात्रावास में रहता था और जियाउल हक़ जो मेरे मित्र भी थे जेएनयू के इतिहास विभाग में पीएचडी कर रहे थे। फ़ारसी और अरबी के जानकर थे मतलब उर्दू तो उन्हें आती ही थी। तो जब चारु को हरदेवी के पिता रायबहादुर कन्हैयालाल की उर्दू में लिखी किताब मिली जो अपने समय के नामी इतिहासकार भी थे और आज भी पाकिस्तान में उनकी लिखी किताबें पढ़ाई जाती हैं तो उसे ठीक से पढ़ने वाले की खोज शुरू हुई। चारु उर्दू पढ़ लेती है लेकिन इतनी महत्वपूर्ण सूचना का कहीं ग़लत पाठ न कर ले इसलिए उसने जियाउल भाई से मदद करने को कहा। उसका संदर्भ ऊपर आप चारु के लेख में देख सकते हैं।
इस वाक्य में चारु ने साफ़-साफ़ लिखा है कि "तारीख़ - ए - लाहौर" की भूमिका में अपना परिचय रायबहादुर कन्हैयालाल ने इन शब्दों में लिखा है। आप जरा देखें कि इसे पढ़ना क्या इतना मुश्किल था ? संदर्भ ख़ुद वाक्य के भीतर ही दिया गया है फिर भी गरिमा जी को नहीं दिखा! ऐसी भी क्या नक़ल करना कि जहाँ संदर्भ की ज़रूरत नहीं वहाँ संदर्भ डाल रहें हैं, वह भी ग़लत और पूरा माल जहाँ से उठाया उसका नाम ग़ायब कर दिया।

एक और प्रसंग देखिए,
"हरदेवी अनुमानतः 1863 में जन्मी होंगी क्योंकि 1905 में छपे एक दस्तावेज में उन्हें 42 वर्ष का बताया गया है।"[13]
इसे लिखकर गरिमा जी ने यह संदर्भ यह दिया है-

[13] **पृष्ठ १६**

3. 'भारत भगिनी' के सर्कुलेशन का ब्योरा देते हुए लिखा गया है ''प्रोपराइटर : श्रीमती हरदेवी, कायस्थ, एज, 42, डाटर ऑफ द लेट राय बहादुर कन्हैयालाल, एग्जीक्यूटिव इंजीनियर, लाहौर एंड वाइफ आफ रोशनलाल, बी.ए. बैरिस्टर एट लॉ (01) पब्लिशर इज हेमराज खत्री, एज 34; द पंजाब प्रेस, 1880-1905, नार्मन जेरल्ड बेरियर, पॉल वेल्ज़, अंक 14 ऑफ ओकेजनल पेपर्स : साउथ एशिया सीरीज़, मिशिगन स्टेट यूनिवर्सिटी एशियन स्टडीज़ सेंटर, प्रकाशक रिसर्च कमिटी ऑफ पंजाब 1970.

4. हिन्दू विडोज़ बाई वन ऑफ देम, रिटन बाय अ यंग विडो, एंड ट्रांसलेटेड बाय, एन इंग्लिश लेडी; जर्नल ऑफ द नेशनल इंडियन एसोसिएशन इन एड ऑफ सोशल प्रोग्रेस इन इंडिया, नवम्बर 1881, लन्दन; सी. केगन पॉल एंड कम्पनी, पृष्ठ 624 -630.

आमुख / 55

इसके बाद चारु के लेख से इस सन्दर्भ का मिलान कीजिए। सीधे चारु की संदर्भ सूची से सूचना निकाल ली गई है । आप इन दोनों संदर्भों को मिला कर देख सकते हैं। कितने उदाहरण दिए जायें!

36. पंजाब के अख़बारों की इस रिपोर्ट में 'भारत भगिनी' की 1901–1905 तक के सर्कुलेशन का ब्योरा दिया है। यहाँ लिखा है—"प्रोपराइटर : श्रीमती हरदेवी, कायस्थ, एज–42, डाटर ऑफ द लेट राय बहादुर कन्हैयालाल, एक्ज़ीक्यूटिव इंजीनियर, लाहौर, एंड वाइफ़ ऑफ रोशनलाल, बी.ए. बैरिस्टर–एट–लॉ (01), पब्लिशर इज हेमराज, खत्री, एज 34; द पंजाब प्रेस, 1880–1905, नार्मन जेरल्ड बैरियर, पॉल वेल्ज़, इश्यू 14 ऑफ ओकेजनल पेपर : साउथ एशिया सीरिज़, मिशिगन स्टेट यूनिवर्सिटी एशियन स्टडीज़ सेंटर, प्रकाशक—रिसर्च कमिटी ऑफ द पंजाब, 1970

37. 'हिंदू विडोज़ बाई वन ऑफ देम, रिटेन बाई अ यंग विडो, एंड ट्रांसलेटेड बाई एन इंग्लिश लेडी', जर्नल ऑफ द नेशनल इंडियन एसोसिएशन इन एड ऑफ सोशल प्रोग्रेस इन इंडिया, नं. 131, नवम्बर 1881, लंदन, सी. केगन पॉल एंड कम्पनी, पृ. 624–630

अनेक प्रसंग ऐसे हैं जहाँ गरिमा जी ने थोड़ी चालाकी भी दिखायी है और और कुछ शब्दों को बदल दिया है। ऐसा करते हुए पता नहीं वह किसे मूर्ख बना रही थीं । इस प्रसंग पर मेरे लिखने का कारण यह भी है कि चारु के लिखे को मैंने ही टाइप किया था और लेख में स्पेसिंग को लेकर कुछ अशुद्धियां रह गई थी। जब मैंने गरिमा जी का लिखा समालोचन ब्लॉग वाला लेख और यह भूमिका पढ़ी तो देखता हूँ कि वह अशुद्धियाँ यहाँ तक चली आई हैं। या तो गरिमा जी ने चारु के लेख से कट पेस्ट किया है या बड़ी श्रद्धा के साथ नक़ल की है। जहाँ तक मुझे याद है चारु के पीएचडी थीसिस की सीडी viva परीक्षा के लिए दिल्ली विश्वविद्यालय ने उनके बेहद करीबी मित्र को भेजी थी। इसके अलावा कहीं भी लेख की सॉफ्ट कॉपी उपलब्ध नहीं है।

किसी शोधपरक पुस्तक की समीक्षा, अगर अकादमिक चोरी की समीक्षा बनकर रह जाए तो सवाल उस पुस्तक तक सीमित नहीं रह जाता। प्रश्न तब एक अकादमिक समुदाय के रूप में हिन्दी साहित्यिक क्षेत्र और उसके भीतर मौजूद पढ़ने की संस्कृति, छापने की संस्कृति और शोध की संस्कृति तक जा पहुँचता है। जिसके लिए सम्पादक , प्रकाशक, पाठक और शोधार्थी सभी ज़िम्मेदार हैं। सोचना होगा कि आख़िर किस तरह का शोध हम हिन्दी के भीतर कर रहे हैं और किन आधारों पर उसे प्रकाशित और प्रचारित कर रहे हैं। हम किसी किताब को प्रकाशित करने से पहले क्या अंतरराष्ट्रीय अकादमिक मानकों का पालन करते हैं? क्या प्लेजियरिज़्म की जाँच और पीयर समीक्षा की प्रक्रिया की यहाँ कोई जगह है? यहाँ मैं बहुत

सम्मानपूर्वक कहना चाहूँगा कि इतनी मुखर अकादमिक चोरी संपादिका के एक विद्वान के रूप में अकादमिक जगत में वैधता पर प्रश्न चिह्न लगाती है और उनकी दूसरी सभी रचनाओं और विश्लेषणों को संदेह के घेरे में ला देती है।

अब इससे अधिक लिखना और उसी बात को बार-बार दोहराना निष्प्रयोजन है। गरिमा जी द्वारा किया गया हरदेवी की किताबों का विश्लेषण काफ़ी उथला है और कई जगह पर अंतर्विरोध से भरा हुआ। हरदेवी की किताब तो सम्पादित करके प्रकाशित कर दी गई है लेकिन वे थीं कौन इसकी कोई मौलिक दृष्टि सम्पादिका विकसित नहीं कर पाई है। कई जगह वे अपने पुराने स्टैंड का बचाव करती दिखती हैं जिसके अनुसार उन्नीसवीं सदी की दुनिया पुरुषों की थी और एक स्त्री का उसमें होना कोई असामान्य परिघटना थी। यह इतिहास की बुर्जुवा-केंद्रित दृष्टि बिन्दु से उभरा विश्लेषण है। दूसरी ओर हरदेवी एक नई हकीकत और नवीन सूचनाओं के साथ सम्मुख हैं। जिन्हें पूरी तरह से अपनी पुरानी रूढ़ धारणा के साथ सम्पादित करना असंभव है। हरदेवी संबंधी इस "शोध" में सम्पादिका ने किताब छपवाने के अलावा कुछ किया नहीं। ऐसे में बिना प्राथमिक स्रोत में डूबे पुरानी दृष्टि से मुक्ति पाना उनके लिए असंभव है। इसका नतीजा यह हुआ है कि वह एक जगह एक बात को कहती और फिर उसे किसी दूसरी बात से काटती हुई एक अंतर्विरोध से भरी संपादकीय भूमिका लिख पाई है। जो अपने प्रस्थान से अंत तक कुछ भी नया या स्पष्ट कह पाने में सक्षम नहीं है। बड़े-बड़े दार्शनिकों और विचारकों के नाम भी इसमें कही गई तमाम बातों को किसी संबंध सूत्र में पिरोने या तारतम्य लाने में असफल रहे हैं ।

अंत में यह सवाल खड़ा होता है कि गरिमा जी ने पूरी तरह नक़ल करते हुए भी चारु सिंह के शोध को अपने संदर्भ से गायब क्यों कर दिया? इसका कारण समझ आता है अब तक की उनकी दृष्टि जिसमें वे मानती थीं कि -उन्नीसवीं सदी का सार्वजनिक क्षेत्र तो पुरुषों का क्षेत्र था और उस वक़्त की हर हिन्दू और मुसलमान औरतें तो घरेलू क्षेत्र तक सीमित थीं। इस पूरे प्रसंग के लिए आलोचना पत्रिका में 2020 में प्रकाशित चारु सिंह के निबंध 'प्रतिलोकवृत्त के रूप में स्त्रियां' को पढ़ सकते हैं। उसमें गरिमा श्रीवास्तव की उपरोक्त धारणाओं की चारु ने आलोचना की थी। चारु का मानना था कि उन्नीसवीं सदीं के हिन्दी क्षेत्र में औरतें एक प्रतिलोकवृत्त[14] के रूप में मौजूद थीं और हेबरमास की सार्वजनिक क्षेत्र की व्याख्या जो औरतों को घरेलू क्षेत्र तक बाँध कर देखती है, इस युग की हरदेवी जैसी लेखिकाओं की व्याख्या के लिए कारगर नहीं है। इस व्याख्या करने के क्रम में उसने अपने लेख में गरिमा श्रीवास्तव की उपरोक्त तर्कों की विस्तार से आलोचना भी की थी।[15]

---

[14] **सिंह, चारु . प्रतिलोकवृत्त के रूप में स्त्रियाँ, आलोचना- अक्टूबर-दिसम्बर 2020**

[15] **उपरोक्त**

अब जब अपनी भूमिका में पहले की स्थापना को बदलकर गरिमा जी हरदेवी के रास्ते 'सार्वजनिक क्षेत्र में औरतों द्वारा लगाई जा रही सेंध' जैसी व्याख्याओं तक जा पहुँची है[16] वाह उनका मौलिक चिन्तन नहीं बल्कि चारु द्वारा हरदेवी जैसी लेखिकाओं को खोज निकालने की स्वाभाविक परिणति है।। गरिमा जी चारु के शोध से सामने आये इन नए तथ्यों के साथ उसकी व्याख्या अपनाती हैं तो इसमें ग़लत क्या है। आलोचना पत्रिका में चारु की लिखी आलोचना के बाद गरिमा जी के ख्याल बदले और वे उसी की तरह से उन्नीसवीं सदी को देखने लगी हैं तो इसको रिकॉग्नाइज़ करना अकादमिक शिष्टाचार के लिए ज़रूरी था।

---

[16] **देखें इस पुस्तक की भूमिका में हरदेवी की यात्रा का प्रसंग**

स्त्री दर्पण डॉट कॉम की माने तो गरिमा श्रीवास्तव "एक हिंदुत्ववादी हैं और राष्ट्र के उत्थान में स्त्रियों के

streedarpan.com

Sunday, December 15, 2024 Home About Us Contact Us Privacy Policy

होम परिचय विरासत स्त्री लेखा साहित्य जयन्ती कविता जन्म दिन लेखक लेखकों की पत्नियां विशेष आमंत्रित सदस्य आमंत्रित सदस्य इक्कीसवीं सदी की कवयित्रियां रचना-पाठ एडमिन नए पोस्ट सप्ताह के पोस्ट गतिविधियाँ अन्य संपर्क

Share

गरिमा श्रीवास्तव का जन्म 18 जुलाई 1970 को नई दिल्ली, भारत में हुआ। पिता डाक्टर रमाशंकर श्रीवास्तव राजधानी कालेज ,दिल्ली विश्विद्यालय में हिन्दी के प्राध्यापक थे। हिन्दी और भोजपुरी में 53 पुस्तकों के रचनाकार डा रमाशंकर श्रीवास्तव की हिन्दी व्यंग्य लेखन में अलग पहचान है।.गरिमा श्रीवास्तव ने हिन्दू कॉलेज, दिल्ली से हिंदी साहित्य में परास्नातक करने के बाद दिल्ली विश्वविद्यालय से एम.फिल और पीएच.डी की उपाधि प्राप्त की।.सरकारी सेवा की शुरुआत उन्होंने भारतीय सैन्य अकादमी (IMA) देहरादून से की। इसके बाद विश्वभारती केन्द्रीय विश्विद्यालय, शातिनिकेतन में बतौर हिन्दी प्राध्यापक सेवाएं दीं। विश्वभारती में कार्य करने के दौरान प्रतिनियुक्ति पर बनस्थली विद्यापीठ ,राजस्थान में भी लगभग एक वर्ष तक रहीं। फरवरी 2005 में उन्हें विश्भारती में एसोसिएट प्रोफ़ेसर (हिन्दी) का पद मिला। 2006 में उनकी नियुक्ति हैदराबाद केन्द्रीय विश्वविद्यालय (HCU) में हुई। वहीं पांच फरवरी.2011 को उनका चयन प्रोफ़ेसर पद पर हुआ।

इस दौरान भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद् (ICCR) ने उन्हें पूर्वी यूरोप के प्राचीनतम विश्वविद्यालय ,जाग्रेब विश्वविद्यालय में बतौर विजिटिंग प्रोफ़ेसर प्रतिनियुक्ति (Deputation) पर भेजा। उसी दौरान उन्होंने युद्ध -पीड़ित स्त्रियों पर क्षेत्र -कार्य भी किया ,जिसे हम उनकी यात्रा -डायरी देह ही 'देह ही देश' में देख सकते हैं। उन्होंने विदेश में कई भाषाएं सीखीं। परिणामस्वरूप 'सिमोन द बोउवार के आत्मकथात्मक उपन्यास ए वैरी ईजी डेथ को देखा जा सकता है। सन 2015 में गरिमा श्रीवास्तव का चयन जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के भारतीय भाषा केंद्र, भाषा साहित्य और संस्कृति अध्ययन संस्थान में बतौर प्रोफ़ेसर हुआ। वे हिन्दुत्ववादी हैं और राष्ट्र के उत्थान में स्त्रियों के योगदान पर शोध करती हैं .उनकी अबतक 23 पुस्तकें प्रकाशित हैं और 5 पुस्तकें प्रकाशनाधीन हैं। वे विभिन्न उच्चस्तरीय अकादमिक समितियों की सदस्य हैं। इनकी दो पुस्तकें किशोरीलाल गोस्वामी (2016) और लाला श्रीनिवासदास (2007) भारतीय साहित्य अकादमी द्वारा प्रकाशित हुई हैं।

योगदान पर शोध करती हैं।" हमें उनकी विचारधारा के बारे में कुछ नहीं कहना लेकिन क्या हिंदुत्ववादी होने भर से गरिमा जी को किसी दूसरे के काम को अपने नाम से हथियाने की छूट मिल जानी चाहिए?

।

गरिमा जी लोगों को बता रही हैं कि उन्होंने एक जगह चारु का नाम लिया है । क्या बाकी सारा शोध उन्होंने ख़ुद किया है? यह भी क्या वाक़ई सभी सूचनाएँ इंटरनेट पर मौजूद हैं? अगर आधी सूचनाएँ हैं भी

तो क्या उन्होंने ख़ुद खोजीं या चारु के लेख से उठाईं? उठाया तो क्या उनका संदर्भ दिया? क्या इंटरनेट पर मौजूद सूचनाएँ शोध होती हैं ? अगर नहीं तो फिर इस तरह के तर्क किस काम के ? उन्हें खोजने की दृष्टि 2016 तक क्यों न थी?
मैंने यह लेख गरिमा जी को छापने वाले हर संपादक को दिया। सबने बात दबा दी। यह पिछले अक्टूबर से घूम रहा है । भीतर ही भीतर सब जानते हैं लेकिन किसी की रीढ़ में ताक़त नहीं कि सच का साथ दें।

आलोचना और राजकमल प्रकाशन ने जिस तरह एक नए स्कॉलर के साथ खड़े होने का फ़ैसला लिया है , उसके लिए मामूली हिम्मत नहीं चाहिए। वे जानते थे कि गरिमा जी और रमन सिन्हा व्यक्तिगत कीचड़ उछालेंगे। आप आलोचना पत्रिका के लिए लिख रही हैं कि उसे पब्लिसिटी चाहिए? वह ख़त्म हो रही है? फिर क्यों ऐप हरदोई अंक में उसने लेख भेजती रहती हैं और लोगों के पीछे पड़कर अपनी किताबों की समीक्षा उसमें छपवाती हैं ।

कहने को तो बहुत कुछ है लेकिन गुरु का सम्मान करके विराम लेता हूँ।
प्रकाश कुमार